[2020] 8 एस. सी. आर. 443

इन आरईः प्रशांत भूषण और एएनआर।

(सुओ मोटो अवमानना याचिका (सी. आर. एल.) 2020 का नंबर 1)

14 अगस्त, 2020

[अरुण मिश्रा, बी. आर. गवई और कृष्णा मुरारी, जे. जे.]

न्यायालय की अवमाननाः

आपराधिक अवमानना सुओ मोटू द्वारा अवमानना कार्यवाही

सुप्रीम कोर्ट-ट्विटर पर उनके द्वारा पोस्ट किए गए दो ट्वीट्स के आधार पर और ट्विटर वेबसाइट के कंटेनर्स नंबर 2 के खिलाफ भी कंटेनर्स नंबर 1 (एक वकील) के खिलाफ-आयोजितः एक नागरिक, जबकि

अपने अधिकार यू/आर्ट का प्रयोग करते हुए। 19 (1) संविधान को न्यायाधीश, न्यायपालिका और उसके कामकाज की निष्पक्ष आलोचना करने का अधिकार है।

लेकिन, यदि इस तरह के अधिकार का प्रयोग करते समय कोई व्यक्ति सीमा को पार करता है और न्यायाधीशों और न्याय प्रशासन की संस्था को बदनाम करने की प्रवृत्ति रखता है और न्यायालय की गरिमा और अधिकार को कमजोर करता है और न्यायिक संस्थानों में जनता के विश्वास को हिलाता है, तो यह 'आपराधिक अवमानना' के दायरे में आएगा-हालांकि, जब एक व्यक्ति के रूप में एक न्यायाधीश के खिलाफ बयान दिया जाता है, तो अवमानना क्षेत्राधिकार उपलब्ध नहीं होगा।

उदारता को इस हद तक नहीं बढ़ाया जा सकता है, जो न्यायपालिका की संस्था की नींव पर दुर्भावनापूर्ण, घृणित, सुनियोजित हमले से निपटने में कमजोरी हो सकती है और

इस प्रकार लोकतंत्र की नींव को नुकसान पहुँचाता है-समकालीन नंबर 1 को आपराधिक अवमानना का दोषी ठहराया जाता है-समकालीन नंबर 2 को आरोपमुक्त कर दिया जाता है-भारत का संविधान-कला। 19 (1) और 129।

स्वतः संज्ञान अवमानना कार्यवाही-उच्चतम न्यायालय द्वारा-उच्चतम न्यायालय के समक्ष दायर अवमानना कार्यवाही शुरू करने की मांग करने वाली एक याचिका

महान्यायवादी की सहमति के बिना न्यायालय-न्यायालय

मामले का स्वतः संज्ञान लिया-क्या कार्यवाही

स्वतः उपचार किया जा सकता है-आयोजितः अवमानना कार्यवाही शुरू करने के लिए उच्चतम न्यायालय की शक्ति अनुच्छेद से प्राप्त होती है। 129 संविधान की धारा-ऐसी शक्ति न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 के प्रावधानों द्वारा सीमित नहीं है-स्वतः संज्ञान कार्यवाही के लिए, महान्यायवादी की सहमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है-केवल आवश्यकता यह है कि, अपनाई गई प्रक्रिया न्यायपूर्ण और निष्पक्ष और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार होनी चाहिए।

भारत का संविधान-कला। 129 - न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971। 15 .

समवर्ती संख्या 1 को न्यायालय की अवमानना का दोषी ठहराते हुए,

अदालत पकड़नाः 1. अवमानना की कार्रवाई के लिए सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति का स्रोत भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत है। अवमानना शुरू करने की इस न्यायालय की शक्ति है

न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 के प्रावधानों द्वारा किसी भी तरह से सीमित नहीं। न्यायालय के पास अवमानना से निपटने के लिए संवैधानिक शक्तियां निहित हैं और अधिनियम की धारा 15 नहीं है।

अवमानना के लिए नोटिस जारी करने की शक्ति का स्रोत। यह केवल

वह प्रक्रिया प्रदान करता है जिसमें ऐसी अवमानना शुरू की जानी है। जहाँ तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, न्यायालय अपने द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर स्वतः संज्ञान लेते हुए कार्यवाही शुरू कर सकता है। एकमात्र आवश्यकता यह है कि पी. एन. के निर्णय में निर्धारित प्रक्रिया। डूडा मामले का पालन किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, निस्संदेह इसका पालन किया गया है।

जहाँ तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, वहाँ कोई नहीं है महान्यायवादी सहित किसी की भी सहमति लेने की आवश्यकता, क्योंकि न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर रहा है

अवमानना के लिए नोटिस जारी करें। एक बार जब न्यायालय संज्ञान लेता है, तो मामला विशुद्ध रूप से न्यायालय और अवमानकर्ता के बीच होता है। एकमात्र आवश्यकता यह है कि अपनाई जाने वाली प्रक्रिया न्यायपूर्ण और निष्पक्ष और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार होनी चाहिए। वर्तमान मामले में, कथित अवमानकों को जारी किए गए नोटिस में स्पष्ट रूप से उन ट्वीट्स का उल्लेख है जिनके आधार पर अदालत स्वतः संज्ञान ले रही है। कथित अवमानकर्ता संख्या 1 ने भी स्पष्ट रूप से समझा है कि न्यायालय किस आधार पर है।

उसके खिलाफ कार्यवाही, जैसा कि उसके द्वारा दायर विस्तृत हलफनामे से स्पष्ट है-जवाब। [पैरा 18] [476-ए-ई]

रीः विजय कुर्ले और ओआरएस। (2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 407; पी. एन. डूडा वी। पी. शिव शंकर और अन्य (1988) 3 एससीसी

167 : [1988] 3 एस. सी. आर. 547-पर निर्भर।

इन आरईः प्रशांत भूषण और एएनआर।

2.1 यह अच्छी तरह से तय है कि एक नागरिक अधिकार का प्रयोग करते हुए

भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 (1) के तहत एक न्यायाधीश, न्यायपालिका और उसके कामकाज की निष्पक्ष आलोचना करने का अधिकार है। हालाँकि, अनुच्छेद 19 (1) के तहत अधिकार अनुच्छेद 19 के खंड (2) के तहत प्रतिबंध के अधीन है। अनुच्छेद 19 (1) के तहत अधिकार और अनुच्छेद 19 के खंड (2) के तहत उचित प्रतिबंध को ठीक से संतुलित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। यदि कोई नागरिक अनुच्छेद 19 (1) के तहत अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए सीमाओं को पार करता है और एक बयान देता है, जो न्यायाधीशों और न्याय प्रशासन की संस्था को बदनाम करता है, तो ऐसी कार्रवाई अदालत की अवमानना के दायरे में आएगी। यदि कोई नागरिक ऐसा बयान देता है जो इस न्यायालय की गरिमा और अधिकार को कम करता है, तो यह 'आपराधिक अवमानना' के दायरे में आएगा। जब इस तरह का बयान न्यायिक संस्थानों में जनता के विश्वास को हिलाता है, तो यह भी 'आपराधिक अवमानना' के दायरे में आ जाएगा। [पैरा 57] [502-डी-ई]

2.2 . इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब एक व्यक्ति के रूप में किसी न्यायाधीश के खिलाफ बयान दिया जाता है, तो अवमानना का अधिकार क्षेत्र उपलब्ध नहीं होगा।

हालांकि, जब एक न्यायाधीश के रूप में एक न्यायाधीश के खिलाफ बयान दिया जाता है और जिसका न्याय के प्रशासन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, तो न्यायालय निश्चित रूप से अवमानना क्षेत्राधिकार का आह्वान करने का हकदार होगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अनुच्छेद 19 (1) के तहत निष्पक्ष आलोचना के अधिकार का प्रयोग करते हुए, यदि कोई नागरिक जनहित में सही तरीके से अधिकार का उल्लंघन करता है, तो यह न्यायालय अवमानना अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने और उदारता दिखाने में धीमा होगा। हालाँकि, जब न्यायपालिका की छवि को खराब करने के लिए इस तरह के बयान की गणना की जाती है, तो न्यायालय मूक दर्शक नहीं रहेगा। जब इस न्यायालय के अधिकार पर ही हमला होता है, तो न्यायालय एक पर्यवेक्षक नहीं होगा। 'प्राधिकरण' शब्द का अर्थ न्यायाधीशों की बलपूर्वक शक्ति नहीं है, बल्कि एक सम्मान और सम्मान है जो उनके न्याय और अखंडता की राय से उन्हें और उनके कार्यों को दिया जाता है। [पैरा 58] [502-एफ-एच; 503-ए]

2.3 यदि प्रणाली में प्रणालीगत सुधार को सक्षम करने के लिए एक रचनात्मक आलोचना की जाती है, तो न्यायालय इसका आह्वान नहीं करेगा

अवमानना क्षेत्राधिकार। हालाँकि, न्यायालय गंभीरता और गंभीरता के साथ कार्य करेगा जहाँ न्याय एक सकल अपराध द्वारा खतरे में पड़ जाता है।

और/या न्यायाधीशों पर निराधार हमला और जहां हमले की गणना न्यायिक प्रक्रिया में बाधा डालने या नष्ट करने के लिए की जाती है।

कारकों की समग्रता का मूल्यांकन करते हुए, यदि न्यायालय न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर हमले को निंदनीय, आक्रामक, डराने-धमकाने वाला या क्षमा करने योग्य सीमाओं से परे दुर्भावनापूर्ण मानता है, तो कानून की मजबूत शाखा को जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर उस पर प्रहार करना चाहिए, जो कानून के शासन की सर्वोच्चता को उसके स्रोत और धारा को दूषित करके चुनौती देता है। [पैरा 59] [503-बी-डी]

2.4 पहले ट्वीट के पहले भाग में कहा गया है कि 'सीजेआई राजभवन में एक भाजपा नेता की 50 लाख की मोटरसाइकिल चलाते हैं।

नागपुर बिना मास्क या हेलमेट के '। ट्वीट के इस हिस्से को एक व्यक्ति के रूप में सीजेआई के खिलाफ की गई आलोचना कहा जा सकता है न कि सीजेआई के रूप में सीजेआई के खिलाफ। हालाँकि, ट्वीट के दूसरे भाग में कहा गया है, 'ऐसे समय में जब वह सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखते हैं, नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकारों से वंचित करते हैं'।

भारत के मुख्य न्यायाधीश के रूप में उनकी क्षमता अर्थात प्रशासनिक देश की न्यायपालिका के प्रमुख। उक्त ट्वीट एक आम आदमी को यह आभास देने में सक्षम है कि सीजेआई एक भाजपा नेता की 1 लाख रुपये की मोटरसाइकिल पर अपनी सवारी का आनंद ले रहे हैं, ऐसे समय में जब उन्होंने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है जो नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित कर रहा है।

[पैरा 62] [503-एफ-एच; 504-ए-बी]

2.5 सबसे पहले, जिस तारीख को सीजेआई पर मोटरसाइकिल की सवारी करने का आरोप है, वह उस अवधि के दौरान है जब सुप्रीम कोर्ट गर्मियों की छुट्टी पर था। किसी भी मामले में, उक्त अवधि के दौरान भी, न्यायालय की अवकाश पीठ नियमित रूप से काम कर रही थीं। यह धारणा कि उक्त ट्वीट का इरादा है

बता दें कि भारतीय न्यायपालिका के प्रमुख के रूप में सीजेआई ने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है, जिससे नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित किया गया है। किसी भी मामले में,

यह कथन कि उच्चतम न्यायालय लॉकडाउन में है, कथित अवमानकर्ता संख्या 1 की जानकारी में भी तथ्यात्मक रूप से गलत है। यह एक सामान्य ज्ञान है कि कोविड-19 महामारी के कारण न्यायालय के भौतिक कामकाज को निलंबित करने की आवश्यकता थी। यह सर्वोच्च न्यायालय में सामूहिक सभा से बचने और महामारी के प्रकोप को रोकने के लिए था। हालाँकि, भौतिक सुनवाई के निलंबन के तुरंत बाद, न्यायालय ने वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से काम करना शुरू कर दिया। 23.3.2020 IN RE सेः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

आई. डी. 1 तक, न्यायालय की विभिन्न पीठें नियमित रूप से बैठती रही हैं और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करती रही हैं। 23.3.2020 से 4.8.2020 तक विभिन्न पीठों की कुल बैठकों की संख्या 879 है। इस अवधि के दौरान न्यायालय ने 12748 मामलों की सुनवाई की है। उक्त अवधि में, इस न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर 686 रिट याचिकाओं पर विचार किया है। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि बयान, कि सीजेआई ने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है, नागरिकों को उनके अधिकार से वंचित कर दिया है। न्याय तक पहुँचने का मौलिक अधिकार स्पष्ट रूप से गलत है। कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 स्वयं वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से कई मामलों में विभिन्न अवसरों पर पेश हुआ है। इतना ही नहीं, बल्कि अपनी व्यक्तिगत क्षमता में भी कथित अवमाननाकर्ता संख्या 1 ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक याचिका में इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाकर न्याय की पहुंच का सहारा लिया है।

[पारस 63 और 64] [504-बी-जी]

2.6 इस आधार पर, इस तरह के बेबुनियाद आरोप लगाने से यह धारणा बनती है कि सीजेआई एक महंगी बाइक की सवारी का आनंद ले रहे हैं, जबकि वह सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखते हैं और इस तरह नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित करते हैं, निस्संदेह गलत, दुर्भावनापूर्ण और निंदनीय है। यह न्यायपालिका की संस्था और सीजेआई की संस्था में बड़े पैमाने पर जनता के विश्वास को हिलाने और न्याय प्रशासन की गरिमा और अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति रखता है। उक्त बयान को अदालतों के भौतिक रूप से काम न करने की उनकी पीड़ा के कारण उनके द्वारा की गई प्रामाणिक आलोचना नहीं कहा जा सकता है। यह तर्क कि पिछले तीन महीनों से अधिक समय से उच्चतम न्यायालय के भौतिक रूप से कार्य न करने के कारण,

नागरिकों के मौलिक अधिकार, जैसे कि हिरासत में लिए गए लोग, निराश्रित और गरीब, और अन्य जो गंभीर और तत्काल समस्या का सामना कर रहे हैं।

शिकायतों का समाधान नहीं किया जा रहा था या निवारण के लिए नहीं लिया जा रहा था, यह उनकी अपनी जानकारी में गलत है। उन्होंने न केवल एक वकील के रूप में बल्कि एक वादी के रूप में भी उक्त अवधि के दौरान न्याय तक पहुँच के अधिकार का लाभ उठाते हुए ऐसा निंदनीय और दुर्भावनापूर्ण बयान दिया है। [पैरा 64] [505-बी-ई]

2.7 जहाँ तक दूसरे ट्वीट का सवाल है, उसके अनुसार भी

कथित अवमानकर्ता नंबर 1 के लिए, ट्वीट तीन अलग-अलग भागों में है। उनके अनुसार, ट्वीट के पहले भाग में उनका

माना जाता है कि लोकतंत्र काफी हद तक [2020] 8 एस. सी. आर. रहा है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

पिछले छह वर्षों के दौरान भारत में नष्ट किया गया। दूसरा भाग उनकी राय है कि सर्वोच्च न्यायालय ने लोकतंत्र को नष्ट करने की अनुमति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और तीसरा भाग विशेष रूप से अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में उनकी राय है। न्यायालय को पहले से कोई सरोकार नहीं है

ट्वीट का हिस्सा क्योंकि यह इस अदालत से संबंधित नहीं है। हालाँकि, समकालीन संख्या 1 ने अपनी राय व्यक्त की है कि सर्वोच्च न्यायालय ने लोकतंत्र को नष्ट करने की अनुमति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और आगे स्वीकार किया है कि तीसरा भाग विशेष रूप से अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में है, इसकी अनुमति देने में। [पारस 65 और 66] [505-ई-एच]

लोकतंत्र। उक्त ट्वीट एक आम नागरिक को जो धारणा देता है, वह यह है कि जब इतिहासकार भविष्य में पीछे मुड़कर देखेंगे, तो उन्हें यह धारणा मिलेगी कि पिछले छह वर्षों में भारत में बिना किसी औपचारिक आपातकाल के भी लोकतंत्र को नष्ट कर दिया गया है और उक्त विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की विशेष भूमिका थी और भारत के अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की उक्त विनाश में अधिक विशेष भूमिका थी। इसमें किसी भी तरह का संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त ट्वीट के खिलाफ निर्देशित किया गया है

उच्चतम न्यायालय ने एक धारणा देते हुए कहा कि पिछले छह वर्षों में लोकतंत्र के विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की एक विशेष भूमिका है और पिछले चार मुख्य न्यायाधीशों की इसमें अधिक विशेष भूमिका थी। यह स्पष्ट है कि आलोचना पूरे उच्चतम न्यायालय और अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों के खिलाफ है। आलोचना किसी विशेष न्यायाधीश के खिलाफ नहीं है, बल्कि सर्वोच्च न्यायालय की संस्था और भारत के मुख्य न्यायाधीश की संस्था के खिलाफ है। यह धारणा कि

उक्त ट्वीट यह बताता है कि पिछले छह वर्षों की अवधि में सर्वोच्च न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीशों ने

भारतीय लोकतंत्र के विनाश में विशेष भूमिका और पिछले चार मुख्य न्यायाधीशों की इसमें अधिक विशेष भूमिका थी। [पारस 67 और 68] [506-ए-डी]

2.9 यह विचार करते हुए कि क्या उक्त आलोचना सद्भावना से की गई थी या नहीं, उपस्थित परिस्थितियों को भी ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। उपस्थित परिस्थितियों में से एक प्रकाशन की सीमा है। ट्वीट द्वारा प्रकाशन लाखों लोगों तक पहुँचता है और इस तरह, आई. एन. आर. ई. में इतनी बड़ी सीमाः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

प्रकाशन भी उन कारकों में से एक होगा जिन पर अच्छे के सवाल पर विचार करते समय विचार करने की आवश्यकता है।

आस्था। एक अन्य परिस्थिति यह है कि जो व्यक्ति इस तरह का बयान देता है। कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 पिछले 30 वर्षों से उच्चतम न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय में वकालत कर रहा है और उसने लगातार जनहित के कई मुद्दों को उठाया है।

लोकतंत्र और उसके संस्थानों के स्वास्थ्य और विशेष रूप से न्यायपालिका के कामकाज और विशेष रूप से इसकी जवाबदेही से संबंधित। कथित अवमानकर्ता की महिमा की रक्षा करने के बजाय न्याय के प्रशासन की संस्था का हिस्सा होना

कानून एक ऐसे कार्य में लिप्त हो गया है, जो न्याय के प्रशासन की संस्था को बदनाम करता है। कथित अवमानकर्ता संख्या 1 से इस न्यायालय के एक जिम्मेदार अधिकारी के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। घृणित आरोप, जो दुर्भावनापूर्ण प्रकृति के हैं और न्यायालय को बदनाम करने की प्रवृत्ति रखते हैं, उनसे अपेक्षा नहीं की जाती है

न्यायपालिका की कार्यप्रणाली, जनहित में प्रामाणिक बनाई गई। [पारस 69 और 70] [506-डी-एच] 2.10 भारतीय न्यायपालिका न केवल उन स्तंभों में से एक है जिन पर भारतीय लोकतंत्र खड़ा है, बल्कि केंद्रीय स्तंभ भी है। भारतीय संवैधानिक लोकतंत्र शासन के आधार पर खड़ा है

कानून से। न्यायिक प्रणाली में देश के नागरिकों का विश्वास, विश्वास और विश्वास कानून के शासन के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य है। संविधान की नींव को हिलाने का प्रयास

लोकतंत्र से सख्ती से निपटना होगा। यह ट्वीट भारतीय लोकतंत्र के इस महत्वपूर्ण स्तंभ की नींव को अस्थिर करने का प्रभाव डालता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह ट्वीट न्यायपालिका की संस्था में जनता के विश्वास को हिला देता है। उक्त ट्वीट भारत के सर्वोच्च न्यायालय और सीजेआई की संस्था की गरिमा और अधिकार को कम करता है और

सीधे कानून की महिमा का सामना करता है। [पैरा 71] [507-बी-ई]

2.11 भारतीय न्यायपालिका को देश के नागरिक सर्वोच्च सम्मान के साथ देखते हैं। जब कोई नागरिक कहीं भी न्याय पाने में विफल रहता है तो न्यायपालिका को अंतिम उम्मीद माना जाता है। सर्वोच्च न्यायालय भारतीय न्यायपालिका का प्रतीक है। उस पर हमला

उच्चतम न्यायालय का प्रभाव केवल [2020] 8 एस. सी. आर. को लागू करने का नहीं है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

सर्वोच्च न्यायालय में विश्वास खोने का सामान्य वादी, लेकिन देश के अन्य न्यायाधीशों के मन में भी अपने सर्वोच्च न्यायालय में विश्वास खो सकता है। अन्य न्यायाधीशों को यह आभास होने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है कि वे दुर्भावनापूर्ण हमलों से सुरक्षित नहीं रह सकते हैं, जब सर्वोच्च न्यायालय दुर्भावनापूर्ण आक्षेपों से खुद को बचाने में विफल रहा है। इस प्रकार, व्यापक जनहित की रक्षा के लिए, देश की सर्वोच्च न्यायपालिका पर हमले के ऐसे प्रयासों से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब न्यायाधीशों या न्याय प्रशासन की संस्था की आलोचना की जाती है तो न्यायालय को उदार होने की आवश्यकता होती है। लेकिन इस तरह

उदारता को इस हद तक नहीं बढ़ाया जा सकता है, जो न्यायपालिका की संस्था की नींव पर दुर्भावनापूर्ण, घृणित, सुनियोजित हमले से निपटने में कमजोरी हो सकती है और इस तरह न्यायपालिका की नींव को नुकसान पहुंचा सकती है।

लोकतंत्र। [पैरा 72] [507-ई-एच; 508-ए]

2.12 भारतीय संविधान ने एक विशेष भूमिका दी है -

इस देश की संवैधानिक अदालतें। सर्वोच्च न्यायालय नागरिकों के मौलिक अधिकारों का रक्षक है, साथ ही लोकतंत्र के अन्य स्तंभों यानी कार्यपालिका और विधानमंडल को संवैधानिक सीमाओं के भीतर रखने का कर्तव्य भी देता है। यदि न्यायपालिका की संस्था में बड़े पैमाने पर जनता के विश्वास को हिलाने के लिए हमला किया जाता है, तो इस तरह के हमले से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायपालिका के लिए कई मामलों में उदारतापूर्वक धर्मार्थ रवैया अपनाना बेहतर हो सकता है, भले ही उसके कार्यों की पूरी तरह से अनुचित और अनुचित आलोचना सुधार के लिए वास्तविक चिंता से की जाती हो। हालाँकि, जब ऐसी कोई योजना और योजना दिखाई देती है जो हमारी न्यायिक प्रणाली में विश्वास को नुकसान पहुँचाने और दुर्भावनापूर्ण हमले करके सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का मनोबल गिराने की प्रवृत्ति रखती है, तो निडर, निष्पक्ष और अडिग न्याय के उच्च मानकों को बनाए रखने में रुचि रखने वालों को दृढ़ता से खड़ा होना होगा। यदि इस तरह के हमले से अपेक्षित दृढ़ता के साथ निपटा नहीं जाता है, तो यह राष्ट्रीय सम्मान को प्रभावित कर सकता है।

और राष्ट्रों के समुदाय में प्रतिष्ठा। निर्भीक और निष्पक्ष न्याय की अदालतें एक स्वस्थ लोकतंत्र की आधारशिला हैं और उन पर दुर्भावनापूर्ण हमलों से उन पर विश्वास कम नहीं होने दिया जा सकता है। यदि न्यायालय आर. ई. में न्यायाधीश पर हमले पर विचार करता हैः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

या अक्षम्य सीमाओं से परे अपमानजनक, आक्रामक, डराने वाले या दुर्भावनापूर्ण न्यायाधीश, कानून के मजबूत हाथ को जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर उस पर प्रहार करना चाहिए जो

कानून के शासन की सर्वोच्चता को उसके स्रोत और धारा को दूषित करके चुनौती देता है। [पैरा 73] [508-ए-एफ]

2.13 इस न्यायालय की संक्षिप्त अधिकारिता का प्रयोग उसकी गरिमा और सम्मान को सही साबित करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए।

व्यक्तिगत न्यायाधीश, जिन पर व्यक्तिगत रूप से हमला किया जाता है या बदनाम किया जाता है, लेकिन कानून और न्याय प्रशासन की महिमा को बनाए रखने के लिए। न्यायपालिका की नींव निडर और निष्पक्ष न्याय देने की अपनी क्षमता में लोगों का विश्वास और विश्वास है। जब नींव को उन कृत्यों द्वारा हिलाने की कोशिश की जाती है जो अदालत के काम में अविश्वास पैदा करके अदालत के अधिकार के लिए असंतोष और अनादर पैदा करते हैं, तो न्यायिक प्रणाली की इमारत नष्ट हो जाती है। कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 द्वारा अपमानजनक/दुर्भावनापूर्ण हमले न केवल एक या दो न्यायाधीशों के खिलाफ हैं, बल्कि पिछले छह वर्षों के अपने कामकाज में पूरे सर्वोच्च न्यायालय के खिलाफ हैं। इस तरह के हमले को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है जो इस न्यायालय के अधिकार के लिए असंतोष और अनादर पैदा करता है। जो ट्वीट विकृत तथ्यों पर आधारित हैं, वे इस प्रकार 'आपराधिक अवमानना' के बराबर हैं। [पारस 74 और 75] [508-एफ-एच; 509-ए-डी]

ब्रह्मा प्रकाश शर्मा और अन्य बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य [1953] एस. सी. आर. 1169; पुनः: हीरा लाल दीक्षित और दो अन्य [1955] 1 एस. सी. आर. 677; सी. के. डाफ्टरी और

ओआरएस। वी. ओ. पी. गुप्ता और अन्य। (1971) 1 एससीसी 626: [1971] पूरक। एस. सी. आर. 76; बरदकांत मिश्रा बनाम। पंजीयक

उड़ीसा उच्च न्यायालय और एक अन्य (1974) 1 एस. सी. सी. 374:

[1974] 2 इसके बाद एस. सी. आर. 282 आया।

ई. एम. शंकरन नम्बूदरीपद बनाम। टी. नारायणन

नाम्बियार (1970) 2 एससीसी 325: [1971] 1 एससीआर 697; पुनः: एस. मुलगांवकर (1978) 3 एससीसी 339 [1978] 3 एससीआर 162; * पी. एन. डूडा वी। पी. शिव शंकर और अन्य (1988) 3 एस. सी. सी. 167: [1988] 3 एससीआर 547; प्रीतम पाल बनाम। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर, पंजीयक के माध्यम से (1993) सपं. 1 एस. सी. सी. 529; पुनः: विनय चंद्र मिश्रा (1995) 2 एस. सी. सी. 584: [1995] 2 एससीआर 638; डी. सी. सक्सेना बनाम। भारत के मुख्य न्यायाधीश (1996) 5 एस. सी. सी. 216: [1996] 3 पूरक।

एस. सी. आर. 677; सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम। संघ का

भारत (1998) 4 एससीसी 409: [1998] 2 एस. सी. आर. 795; अरुंधति

रॉय इन रे (2002) 3 एस. सी. सी. 343 [2002] 2 एस. सी. आर. 212;

न्यायिक पारदर्शिता के लिए राष्ट्रीय वकील अभियान

और सुधार और अन्य v. भारत संघ और अन्य (2019) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 411-पर निर्भर था।

97 ईआर 94 का उल्लेख किया गया है।

3. जहाँ तक कथित अवमानकर्ता संख्या 2 की बात है, वह चिंता का विषय है।

इसके द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण स्वीकार किया जाता है, कि यह केवल मध्यस्थ है और प्लेटफॉर्म पर उपयोगकर्ता क्या पोस्ट करते हैं, इस पर इसका कोई नियंत्रण नहीं है। इस अदालत द्वारा संज्ञान लिए जाने के तुरंत बाद इसने दोनों ट्वीट्स को निलंबित कर दिया है। इसलिए, कथित अवमानकर्ता संख्या 2 को जारी किए गए नोटिस को खारिज कर दिया जाता है। [पैरा 76]

मामला कानून संदर्भ

(2020) एससीसी ऑनलाइन एससी 407

उस पर भरोसा करें

पैरा 17

[1988] 3 एससीआर 547

उस पर भरोसा करें

पैरा 18

[1953] एससीआर 1169

पीछा किया।

पैरा 20

(1955) 1 एससीआर 677

पैरा 23

पीछा किया।

[1971] 1 एससीआर 697

उस पर भरोसा करें

पैरा 24

[1971] पूरक। एससीआर 76

पीछा किया।

पैरा 26

[1974] 2 एससीआर 282

पीछा किया।

पैरा 28

[1978] 3 एससीआर 162

उस पर भरोसा करें

पैरा 38

[1988] 3 एससीआर 547

उस पर भरोसा करें

पैरा 44

(1993) पूरक 1 एस. सी. सी. 529

उस पर भरोसा करें

पैरा 45

[1995] 2 एससीआर 638

उस पर भरोसा करें

पैरा 47

[1996] 3 पूरक। एससीआर 677

उस पर भरोसा करें

पैरा 49

[1998] 2 एससीआर 795

उस पर भरोसा करें

पैरा 53

[2002] 2 एस. सी. आर. 212

उस पर भरोसा करें

पैरा 55

(2019) एससीसी ऑनलाइन एससी 411

उस पर भरोसा करें

पैरा 74 इन आरईः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अंतर्निहित न्यायनिर्णयः सुओ मोटो अवमानना याचिका (सी. आर. एल.) 2020 का नंबर 1।

जानबूझकर और जानबूझकर सार्वजनिक रूप से अपमानजनक टिप्पणी करने के लिए अवमानना कार्यवाही शुरू करने की मांग करने वाली याचिका

भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश (सीजेआई)।

के. के. वेणुगोपाल, महान्यायवादी, दुष्यंत ए. दवे, साजन पूवय्या, वरिष्ठ अधिवक्ता। , सुश्री कामिनी जैसवाल, मनु कुलकर्णी, प्रियदर्शी बनर्जी, सुश्री हिमा लॉरेंस, ऋषि अनेजा, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

प्रशांत भूषण-व्यक्तिगत रूप से।

न्याय

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय दिया गयाः

1. महक नामक व्यक्ति द्वारा इस न्यायालय में एक याचिका दायर की गई।

माहेश्वरी ने इस अदालत के ध्यान में लाते हुए एक ट्वीट किया अधिवक्ता श्री प्रशांत भूषण ने आरोप लगाया कि अवमानकर्ता संख्या 1 ने कथित अवमानकर्ताओं के खिलाफ अवमानना कार्यवाही शुरू करने का अनुरोध किया है।

इस न्यायालय और पूरी न्यायिक प्रणाली के खिलाफ जानबूझकर और जानबूझकर घृणा/निंदनीय भाषण का उपयोग करना। रजिस्ट्री ने उक्त याचिका को इस न्यायालय के प्रशासनिक पक्ष में रखा, जिसमें यह निर्देश देने की मांग की गई कि क्या इसे सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया जाना चाहिए या नहीं, क्योंकि उक्त श्री माहेश्वरी द्वारा उक्त याचिका दायर करने के लिए भारत के लिए विद्वान अटॉर्नी जनरल की सहमति प्राप्त नहीं की गई थी। प्रशासनिक पक्ष से मामले की जांच करने के बाद, प्रशासनिक पक्ष की इस अदालत ने उचित आदेश पारित करने के लिए मामले को न्यायिक पक्ष में सूचीबद्ध करने का निर्देश दिया। तदनुसार, याचिका थी हमारे सामने 22.7.2020 पर रखा गया है। उक्त तिथि पर, हमने निम्नलिखित आदेश पारित कियाः

याचिकाकर्ता ने इस याचिका को दायर करने के लिए भारत के अटॉर्नी जनरल से संपर्क नहीं किया है। प्रशासनिक पक्ष से मामले की जांच करने के बाद, हमने उचित आदेश पारित करने के लिए मामले को अदालत के समक्ष सूचीबद्ध करने का निर्देश दिया है। हम याचिका का अध्ययन कर चुके हैं। हम पाते हैं कि सीजेआई के खिलाफ जो ट्वीट किया गया है, वह सीजेआई के लिए है निम्नलिखित प्रभावः

" सीजेआई राजभवन नागपुर में एक भाजपा नेता की 50 लाख की मोटरसाइकिल पर बिना मास्क या हेलमेट के सवारी करते हैं, ऐसे समय में जब वे सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखते हैं और नागरिकों को उनके अधिकार से वंचित करते हैं।

न्याय तक पहुँचने का मौलिक अधिकार! "[2020] 8 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

इसके अलावा, आज टाइम्स ऑफ इंडिया में एक और ट्वीट प्रकाशित किया गया है, जिसे श्री प्रशांत भूषण ने 27 जून, 2020 को किया था, जब उन्होंने ट्वीट किया था, "जब भविष्य में इतिहासकार पिछले 6 वर्षों को पीछे मुड़कर देखेंगे कि औपचारिक आपातकाल के बिना भी भारत में लोकतंत्र कैसे नष्ट हो गया है, तो वे विशेष रूप से इस विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका और विशेष रूप से पिछले 4 मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका को चिह्नित करेंगे।"

प्रथम दृष्टया हमारा विचार है कि उपरोक्त

ट्विटर पर दिए गए बयानों ने न्याय प्रशासन को बदनाम किया है और आम जनता की नजरों में सर्वोच्च न्यायालय की संस्था और विशेष रूप से भारत के मुख्य न्यायाधीश के कार्यालय की गरिमा और अधिकार को कम करने में सक्षम हैं।

हम ऊपर उद्धृत ट्वीट के अलावा उपरोक्त ट्वीट का भी स्वतः संज्ञान लेते हैं और स्वतः संज्ञान लेते हैं।

कार्यवाही।

हम भारत के महान्यायवादी को नोटिस जारी करते हैं और

ट्विटर की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि ट्विटर इंक, कैलिफोर्निया, यू. एस. ए. सही विवरण है जिन पर श्री प्रशांत भूषण ने ट्वीट किए थे। जाने दीजिए।

उनके द्वारा भी जवाब दाखिल किया जाए।

05.08.2020 पर सूची बनाएँ। "

2. इस न्यायालय द्वारा जारी नोटिस के जवाब में, दोनों ने आरोप लगाया

अवमानकर्ताओं ने अपना-अपना हलफनामा जवाब में दाखिल कर दिया है। कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 श्री प्रशांत भूषण ने 134 पृष्ठों का एक विस्तृत हलफनामा दायर किया है, जो अनुलग्नक के साथ 463 पृष्ठों का है। 3. कथित अवमानकर्ता नंबर 1 का मुख्य तर्क यह है कि जहां तक पहले ट्वीट का संबंध है, यह मुख्य रूप से पिछले तीन महीनों से अधिक समय से सर्वोच्च न्यायालय के भौतिक रूप से काम न करने पर उनकी पीड़ा को रेखांकित करने के लिए किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप नागरिकों के मौलिक अधिकारों, जैसे कि हिरासत में लिए गए लोगों, निराश्रितों और गरीबों, और गंभीर और तत्काल शिकायतों का सामना कर रहे अन्य लोगों को संबोधित या निवारण के लिए नहीं लिया जा रहा था। यह तर्क दिया जाता है कि इसे आई. एन. आर. ई. को उजागर करने के लिए बनाया गया थाः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

उस स्थिति की असंगति जहां एक ओर सीजेआई ने कोविड के डर से अदालत को वस्तुतः लॉकडाउन में रखा हुआ है, जहां शायद ही किसी मामले की सुनवाई हो रही है और जिनकी सुनवाई हो रही है, वीडियो के माध्यम से एक असंतोषजनक प्रक्रिया द्वारा भी। सम्मेलन और दूसरी ओर एक सार्वजनिक स्थान पर बिना मास्क के कई लोगों के साथ देखा जाता है। यह उनका निवेदन है कि कथित विसंगति और सहायक तथ्यों को उजागर करके अपनी पीड़ा व्यक्त करते हुए, पहले ट्वीट को अदालत की अवमानना नहीं कहा जा सकता है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि यदि इसे अवमानना माना जाता है, तो यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को दबा देगा और संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) के तहत एक नागरिक के अधिकार पर एक अनुचित प्रतिबंध का गठन करेगा।

4. जहां तक दूसरे दिनांकित 27.6.2020 ट्वीट का संबंध है, यह उनका निवेदन है कि उक्त ट्वीट में तीन अलग-अलग तत्व हैं, जिनमें से प्रत्येक जो देश की स्थिति के बारे में उनकी प्रामाणिक राय है

पिछले छह वर्षों और सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका और विशेष रूप से पिछले 4 मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका। यह प्रस्तुत किया जाता है कि ट्वीट के पहले भाग में उनकी सुविचारित राय है कि लोकतंत्र में काफी सुधार हुआ है।

पिछले छह वर्षों के दौरान भारत में नष्ट किया गया। दूसरा भाग उनकी राय है, कि सर्वोच्च न्यायालय ने अनुमति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है

लोकतंत्र का विनाश और तीसरा भाग इसकी अनुमति देने में विशेष रूप से अंतिम 4 मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में उनकी राय है। यह उनका निवेदन है कि इस तरह की राय की अभिव्यक्ति, चाहे वह कितनी भी मुखर, असहमत या कुछ लोगों के लिए कितनी भी अप्रिय क्यों न हो, अदालत की अवमानना नहीं हो सकती है। यह उनका तर्क है कि यह लोकतंत्र का सार है कि न्यायपालिका सहित सभी संस्थान इस देश के नागरिकों और लोगों के लिए काम करते हैं और उन्हें किसी संस्थान की स्थिति पर स्वतंत्र रूप से और निष्पक्ष रूप से चर्चा करने और संस्था में सुधार के लिए जनमत बनाने का पूरा अधिकार है।

5. यह आगे तर्क दिया जाता है कि मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय नहीं है और जिस तरह से यह किया जाता है, उसके बारे में चिंता के मुद्दे उठाते हैं।

एक सीजेआई अदालत की छुट्टियों के दौरान खुद का आचरण करता है, या जिस तरह से चार सीजेआई ने "मास्टर ऑफ द रोस्टर" के रूप में अपनी शक्तियों का उपयोग किया है, या उपयोग करने में विफल रहे हैं, उसके बारे में गंभीर चिंता के मुद्दों को उठाता है।

अधिनायकवाद, बहुसंख्यकवाद, असहमति का गला घोंटना, व्यापक राजनीतिक कारावास आदि, "निंदनीय या निंदनीय" नहीं हो सकते हैं और न ही हो सकते हैं।

न्यायालय के अधिकार को कम करना "। यह प्रस्तुत किया जाता है कि न्यायालय की तुलना मुख्य न्यायाधीश या चार मुख्य न्यायाधीशों के उत्तराधिकार के साथ नहीं की जा सकती है। यह प्रस्तुत किया जाता है कि एक सीजेआई, या सीजेआई के उत्तराधिकार के कार्यों की ईमानदारी से आलोचना करने के लिए, अदालत को बदनाम नहीं कर सकता है और न ही यह [2020] 8 एस. सी. आर. को कम करता है।

न्यायालय का अधिकार। यह उसका निवेदन है, कि यह मान लेना या सुझाव देना कि सीजेआई सर्वोच्च न्यायालय है और सर्वोच्च न्यायालय सीजेआई भारत के सर्वोच्च न्यायालय की संस्था को कमजोर करने के लिए है।

6. जहां तक कथित अवमानक संख्या 2 का संबंध है, ट्विटर इंक. ने अपनी ओर से दायर हलफनामे के जवाब में कहा है कि यह एक वैश्विक वेबसाइट है जो अपने उपयोगकर्ताओं की आत्म-अभिव्यक्ति और संवाद के लिए सूक्ष्म-ब्लॉगिंग मंच प्रदान करती है। यह आगे कहा गया है कि कथित अवमानक संख्या 2 ने प्रश्नगत ट्वीट्स को लिखा या प्रकाशित नहीं किया है और इन्हें कथित अवमानक संख्या 1 द्वारा लिखा और प्रकाशित किया गया है। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि यह सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 के तहत प्रदान किए गए अर्थ के भीतर केवल एक 'मध्यस्थ' है और इस प्रकार इसके मंच पर पोस्ट किए गए ट्वीट्स का लेखक या प्रवर्तक नहीं है। इस पृष्ठभूमि में यह प्रस्तुत किया गया है कि कथित अवमानक संख्या 2 का ट्वीट्स पर कोई संपादकीय नियंत्रण नहीं है और यह केवल एक प्रदर्शन बोर्ड के रूप में कार्य करता है। यह भी है

प्रस्तुत किया कि सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 79 के तहत कथित अवमानना सं। 2 सुरक्षित बंदरगाह प्रदान किया गया है

अपने प्लेटफॉर्म पर अपने उपयोगकर्ताओं द्वारा पोस्ट किए गए किसी भी आपत्तिजनक पोस्ट के लिए मध्यस्थ। अंत में यह प्रस्तुत किया जाता है कि अपनी प्रामाणिकता दिखाने के लिए, इस अदालत के दिनांकित आदेश के बाद कथित अवमानक संख्या 2 ने विवादित ट्वीट्स का संज्ञान लेते हुए, उक्त ट्वीट्स तक पहुंच को अवरुद्ध कर दिया और उन्हें अक्षम कर दिया। इस आधार पर यह प्रस्तुत किया गया है कि कथित अवमानक सं. 2 को वर्तमान कार्यवाही से मुक्त कर दिया जाए।

7. हमने व्यापक रूप से सुना है कि कथित समकालीन नंबर 1 की ओर से पेश हुए विद्वान वरिष्ठ वकील श्री दुष्यंत दवे और श्री

साजन पूवय्या, कथित अवमानकर्ता संख्या 2 की ओर से पेश वरिष्ठ वकील।

8. कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री दवे ने प्रारंभिक आपत्ति जताई। उन्होंने प्रस्तुत किया,

कि चूंकि वर्तमान कार्यवाही श्री माहेश्वरी द्वारा दायर याचिका के आधार पर शुरू की गई है, इसलिए इसे स्वतः संज्ञान अवमानना याचिका के रूप में नहीं माना जा सकता है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि जब तक कि उनकी सहमति न हो

भारत के विद्वान महान्यायवादी ने कहा कि श्री माहेश्वरी की शिकायत के आधार पर कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती थी।

9. अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 में 'आपराधिक अवमानना' की परिभाषा पर भरोसा करते हुए, श्री दुष्यंत दवे, विद्वान वरिष्ठ

वकील प्रस्तुत करता है कि नोटिस जारी करने वाले आदेश में यह नहीं कहा गया है कि कथित अवमाननाकर्ता संख्या 1 का कोई भी कार्य निंदनीय या निंदनीय या निंदनीय है।

किसी भी न्यायालय के अधिकार को कम करता है या कम करता है। न ही यह आरई में हैः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

यह उल्लेख करते हुए कि उसका कोई भी कार्य किसी भी न्यायिक कार्यवाही के नियत पाठ्यक्रम में पूर्वाग्रह या हस्तक्षेप या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है या किसी भी तरह से न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है या बाधा डालता है या बाधा डालने की प्रवृत्ति रखता है। इसलिए वह प्रस्तुत करता है कि इस न्यायालय द्वारा शुरू की गई कार्यवाही जारी नहीं रह सकती है।

10. इस संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए

वह भी, उनकी व्यक्तिगत क्षमता में और इस तरह, किसी भी तरह से उन्हें न्याय के उचित पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करने के लिए नहीं कहा जा सकता है या न्यायालय द्वारा कानून का उचित प्रशासन और इसलिए, वर्तमान अवमानना कार्यवाही को जारी रखना उचित नहीं है।

11. वह प्रस्तुत करता है कि ऐसी स्थिति में, प्रश्न का निर्धारण केवल भाषा या विषय-वस्तु के संदर्भ में नहीं किया जाना चाहिए।

बयान दिया। आसपास के सभी तथ्य और परिस्थितियाँ जिनके तहत बयान दिया गया था और प्रचार का स्तर जो इसे दिया गया था, वे प्रासंगिक परिस्थितियाँ होंगी। वे प्रस्तुत करते हैं कि जहां तक पहले ट्वीट का संबंध है, यह कथित अवमानक संख्या 1 द्वारा पिछले तीन महीने से अधिक समय से भौतिक अदालतों के काम न करने और इस तरह वादियों को न्याय के अधिकार से वंचित करने के कारण पीड़ा की अभिव्यक्ति थी। जहां तक दूसरे ट्वीट का संबंध है, श्री दवे के निवेदन में कहा गया है कि यह उनकी राय की अभिव्यक्ति थी

कि चार मुख्य न्यायाधीशों की कार्रवाई या निष्क्रियता के कारण, जिन्होंने औपचारिक आदेश के बिना देश में लोकतंत्र के विनाश में योगदान दिया।

आपात स्थिति। 12. बारदाकांत मिश्रा बनाम उड़ीसा उच्च न्यायालय के पंजीयक के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ के फैसले पर भरोसा करते हुए

अदालत और एक अन्य, विद्वान वरिष्ठ वकील प्रस्तुत करते हैं, कि जब कार्यवाही

1 1 1953 एससीआर 1169

2 (1974) 1 एससीसी 374 [2020] 8 एस. सी. आर.

अवमानना में न्यायाधीश की निंदा के लिए लिया जाता है, अदालत को जो सवाल पूछना होता है वह यह है कि क्या निंदा न्यायाधीश की न्यायाधीश के रूप में है या यह

एक व्यक्ति के रूप में न्यायाधीश का अपमान है। वह प्रस्तुत करता है कि यदि न्यायाधीश का अपमान एक व्यक्ति के रूप में है, तो उसे अपने निजी उपायों पर छोड़ दिया जाता है और न्यायालय को अवमानना के लिए दंडित करने की कोई शक्ति नहीं है। यह है।

प्रस्तुत किया, कि हालांकि, पूर्व मामले में, न्यायालय ईमानदारी से और उन मामलों में अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए आगे बढ़ेगा जो हैं

स्पष्ट और उचित संदेह से परे। यह प्रस्तुत किया जाता है कि वर्तमान मामले में, अपमान, यदि कोई हो, तो एक व्यक्ति के रूप में सी. जे. आई. के खिलाफ है न कि सर्वोच्च न्यायालय के सी. जे. आई. के रूप में और इस प्रकार, न्यायालय की कार्यवाही मान्य नहीं होगी।

13. न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर द्वारा री में की गई टिप्पणियों पर भरोसा करते हुएः एस. मुलगांवकर 3, विद्वान वरिष्ठ वकील प्रस्तुत करते हैं कि अदालत को एक राजसी उदारवाद, तुच्छ और तुच्छ अपराधों को नजरअंदाज करने के लिए तैयार रहना चाहिए। यह प्रस्तुत किया जाता है कि न्यायालय को एक आसान चिड़चिड़ापन के परिणामस्वरूप कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं किया जाएगा। बल्कि, यह विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य पर एक मूक नज़र डालेगा और संवैधानिक और अन्य के एक समूह द्वारा निर्देशित किया जाएगा।

प्रयोग किया जाता है, उचित पैमाने पर सार्वजनिक हित को कम करता है, सार्वजनिक न्याय इसे रोक नहीं सकता है या इसे नियंत्रित नहीं कर सकता है। 14. विद्वान वरिष्ठ वकील श्री दवे प्रस्तुत करते हैं कि पी. एन. डूडा बनाम के मामले में। पी. शिव शंकर और अन्य, तत्कालीन मंत्री

कानून, न्याय और कंपनी मामलों के पी. शिव शंकर ने इस आशय के भयंकर आरोप लगाते हुए एक भाषण दिया था कि सर्वोच्च न्यायालय कुलीन वर्ग के तत्वों से बना था, क्योंकि उन्हें 'संपन्नों के लिए अप्रकाशित सहानुभूति' थी, इसलिए उन्होंने 'मुआवजे' की अभिव्यक्ति की व्याख्या की। वे प्रस्तुत करते हैं कि सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उक्त एक संस्थागत पैटर्न के बारे में राय की अभिव्यक्ति थी। यह प्रस्तुत किया जाता है कि इस तरह के गंभीर आरोपों के बावजूद, अदालत ने पाया कि अवमानना के लिए कार्यवाही का मामला नहीं बनाया गया था।

15. अंत में, श्री दवे प्रस्तुत करते हैं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, कि कथित अवमानक नंबर 1 सुप्रीम कोर्ट में अपने अभ्यास में

3 (1978) 3 एस. सी. सी. 339 4 (1988) 3 एस. सी. सी. 167 आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय ने लोकतंत्र और उसके संस्थानों के स्वास्थ्य और विशेष रूप से न्यायपालिका के कामकाज और विशेष रूप से इसकी जवाबदेही से संबंधित जनहित के कई मुद्दों को लगातार उठाया है, इस न्यायालय को उनके खिलाफ आगे नहीं बढ़ना चाहिए।

16. कानूनी स्थिति अब एकीकृत नहीं है।

17. जहाँ तक विद्वान वरिष्ठ वकील के तर्क का संबंध है

कथित अवमानकर्ता सं. 1 की ओर से उपस्थित होते हुए कहा कि वर्तमान मामले में न्यायालय स्वतः संज्ञान कार्यवाही शुरू नहीं कर सकता था और श्री महक माहेश्वरी द्वारा दायर याचिका पर कार्यवाही के बाद ही आगे बढ़ सकता था।

भारत के लिए विद्वान महान्यायवादी से सहमति प्राप्त की गई थी, बहुत हाल ही में, इस न्यायालय की एक पीठ ने समान माना है री के मामले में प्रस्तुतियाँः विजय कुर्ले और अन्य। ' पीठ ने इस मुद्दे पर इस न्यायालय के विभिन्न फैसलों पर विस्तार से विचार किया है।

इसलिए, निर्णय के निम्नलिखित पैराग्राफ का उल्लेख करना उचित होगा जिसमें पहले के कानून पर विस्तार से चर्चा की गई हैः

" उच्चतम न्यायालय की शक्तियाँ

7. इससे पहले कि हम व्यक्तिगत रूप से आपत्तियों पर विचार करें, हमें यह समझने की आवश्यकता है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 और 142 के आलोक में सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना से निपटने के संबंध में भारत के सर्वोच्च न्यायालय की क्या शक्तियां हैं, जब इसे न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 के संयोजन में पढ़ा जाता है। कथित अवमानकर्ताओं के अनुसार, अदालत की अवमानना अधिनियम अंतिम है

मामले में शब्द और यदि प्रक्रिया के तहत निर्धारित

अदालत की अवमानना अधिनियम का पालन नहीं किया गया है तो कार्यवाही को छोड़ना होगा। दूसरी ओर, विद्वान न्यायमित्र श्री सिद्धार्थ लूथरा ने बड़ी संख्या में निर्णयों का संदर्भ देते हुए तर्क दिया कि उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होने के नाते न्यायालय की अवमानना अधिनियम के प्रावधानों से बाध्य नहीं है। एकमात्र आवश्यकता यह है कि अपनाई जाने वाली प्रक्रिया न्यायपूर्ण और निष्पक्ष हो और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार हो।

भारत के संविधान का अनुच्छेद 129 इस प्रकार हैः

" 129. उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा। उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसके पास अपने अवमान के लिए दंडित करने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी।

5 3 2020 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 407 (सुओ मोटू अवमानना याचिका (आपराधिक) 2019 की संख्या 2 [2020] 8 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अनुच्छेद 129 को नंगे पढ़ने से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि इस न्यायालय के पास अभिलेख न्यायालय होने के नाते सभी शक्तियां होंगी -

स्वयं की अवमानना। यह एक संवैधानिक शक्ति है जो इसे कानून द्वारा हटाया या किसी भी तरह से संक्षिप्त नहीं किया जा सकता है।

भारत के संविधान का अनुच्छेद 142 इस प्रकार है -

निम्नलिखित हैः

" 142. फरमानों और आदेशों का प्रवर्तन

उच्चतम न्यायालय और खोज आदि के बारे में आदेश। - (1)

उच्चतम न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए ऐसी डिक्री पारित कर सकता है या ऐसा आदेश दे सकता है जो उसके समक्ष लंबित किसी भी मामले या मामले में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक हो, और इस तरह से पारित कोई डिक्री या आदेश इस प्रकार किया जाएगा -

भारत के पूरे क्षेत्र में इस तरह से लागू किया जा सकता है जो किसी भी कानून द्वारा या उसके तहत निर्धारित किया जाए संसद और, जब तक कि इस संबंध में प्रावधान नहीं किया जाता है,

ऐसी रीति जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विहित करे।

(2) संसद द्वारा इस संबंध में बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन, सर्वोच्च न्यायालय,

भारत के पूरे क्षेत्र में, सभी और हर शक्ति है

सुरक्षित करने के उद्देश्य से कोई भी आदेश देना

किसी व्यक्ति की उपस्थिति, किसी भी दस्तावेज की खोज या उत्पादन, या किसी की जांच या सजा स्वयं की अवमानना "।

अनुच्छेद 142 में यह भी प्रावधान है कि यह न्यायालय किसी को भी दंडित कर सकता है।

स्वयं की अवमानना के लिए व्यक्ति लेकिन यह शक्ति संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के प्रावधानों के अधीन है। अनुच्छेद 129 और अनुच्छेद 142 के खंड (2) के प्रावधानों की तुलना से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि जहां संस्थापक पिताओं ने महसूस किया कि अनुच्छेद 142 के खंड 92 के तहत शक्तियां संसद द्वारा बनाए गए किसी भी कानून के अधीन हो सकती हैं, वहीं जहां तक अनुच्छेद 129 का संबंध है, ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है। अनुच्छेद 142 के खंड (2) के तहत शक्ति अभिलेख न्यायालय की शक्ति का प्राथमिक स्रोत नहीं है जो कि अनुच्छेद 129 है। और अनुच्छेद 129 में ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है। अवमानना के कानून में समरादित्य पाल ने कानूनी स्थिति को बहुत संक्षिप्त रूप से इस प्रकार बताया हैः

इन आरईः प्रशांत भूषण और एएनआर।

" हालाँकि अवमानना का कानून काफी हद तक 1971 के अधिनियम द्वारा शासित होता है, लेकिन अब भारत में यह तय हो गया है कि उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 215 और 129 से अपना अधिकार क्षेत्र और शक्ति प्राप्त करते हैं। इस स्थिति के परिणामस्वरूप "न्यायिक स्व-व्यवहार" के लिए गुंजाइश मिलती है।

उच्च न्यायालयों को भी संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत सर्वोच्च न्यायालय की तरह समान शक्तियां प्राप्त हैं। मुख्य तर्क

कथित अवमानकर्ताओं का यह कहना है कि नोटिस अदालत की अवमानना अधिनियम के प्रावधानों के संदर्भ में जारी किया जाना चाहिए था और अदालत की अवमानना अधिनियम का कोई भी उल्लंघन पूरे मामले को दूषित कर देगा।

कार्यवाही। हम इस तर्क को स्वीकार नहीं करते हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि स्वयं की अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति एक संवैधानिक है इस न्यायालय में निहित शक्ति, ऐसी शक्ति को विधायी अधिनियम द्वारा भी संक्षिप्त या छीन नहीं लिया जा सकता है।

8. प्रतिद्वंद्वी विवाद की सराहना करने के लिए, हमें करना होगा दोनों पक्षों द्वारा किए गए कई निर्णयों का संदर्भ।

इस मुद्दे पर पहला निर्णय सुखदेव सिंह सोढ़ी बनाम है। पेप्सू उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और न्यायाधीश। यह उल्लेख करना उचित होगा कि उक्त निर्णय न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1952 के संदर्भ में दिया गया था। उक्त मामले में इस न्यायालय के समक्ष मुद्दा यह था कि क्या अवमानना कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (Cr.PC) के तहत कार्यवाही कहा जा सकता है और सर्वोच्च न्यायालय के पास Cr.PC के तहत कार्यवाही को एक अदालत से दूसरी अदालत में स्थानांतरित करने की शक्ति थी। स्थानांतरण के लिए अनुरोध को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दियाः

..... इसलिए हम मानते हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता

यह उच्च न्यायालय द्वारा विचारणीय अवमानना के मामलों में लागू नहीं होता है। उच्च न्यायालय इससे संक्षिप्त रूप से निपट सकता है और अपनी प्रक्रिया अपना सकता है। बस इतना ही आवश्यक है कि प्रक्रिया निष्पक्ष हो और अवमानकर्ता को उसके खिलाफ लगाए गए आरोप के बारे में अवगत कराया जाए उसे और बचाव करने के लिए एक उचित और उचित अवसर दिया गया

स्वयं। यह नियम प्रिवी काउंसिल द्वारा इन रे पोलार्ड (एल. आर. 2 पी. सी. 106 120 पर) में निर्धारित किया गया था और भारत में इसका पालन किया गया था।

और बर्मा में इन रे वल्लभदास (आई. एल. आर. 27 बम। 394 390 पर)

और इब्राहिम मामोजी पारेख बनाम। राजा सम्राट (आई. एल. आर. 4)

रंग। 257 259-261) पर। हमारे विचार में यह अभी भी कानून है। "[2020] 8 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

9. इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने श्री सी. के.

डैफ्टरी वी। श्री ओ. पी. गुप्ता एक ऐसे मामले पर विचार कर रहे थे जिसमें अवमानकर्ता ने इस न्यायालय के 2 न्यायाधीशों पर भद्दे आक्षेप लगाने वाली एक पुस्तिका प्रकाशित की थी। तर्क के दौरान, अवमानकर्ता ने एक याचिका दायर की कि सभी सबूत उन्हें प्रस्तुत नहीं किए गए हैं और एक अनुरोध किया कि याचिकाकर्ता

याचिका के साथ संलग्न "पर्चा" या "पुस्तक" प्रस्तुत करने के लिए कहा जाए। अदालत ने इस तर्क को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि पुस्तिका/पर्चे को मूल रूप से याचिका के साथ जोड़ा गया था और अदालत ने निर्देश दिया था कि मामले का फैसला हलफनामों पर किया जाए।

10. एक विशिष्ट शुल्क की अनुपस्थिति के संबंध में

न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक विशिष्ट आरोप तैयार करने की आवश्यकता नहीं है और एकमात्र आवश्यकता यह है कि एक निष्पक्ष प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए। न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1952 से निपटने के लिए इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दियाः

" 58. हम यहाँ भी किसी कानून से चिंतित नहीं हैं।

संसद द्वारा बनाया गया। अनुच्छेद 129 से पता चलता है कि सर्वोच्च

न्यायालय के पास अभिलेख न्यायालय की सभी शक्तियाँ हैं, जिनमें शामिल हैं -

स्वयं की अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति और अनुच्छेद 142 (2) हमें किसी भी अवमानना की जांच करने में सक्षम बनाता है। यह न्यायालय "।

11. इसके बाद, इस न्यायालय ने टिप्पणियों को मंजूरी दी

सुखदेव सिंह सोधी के मामले में (ऊपर) और निम्नलिखित रूप में अभिनिर्धारित किया गयाः

" 78. हमारे विचार में यह अभी भी कानून है। इसके अनुसार

इस न्यायालय की प्रथा के साथ कि एक नोटिस जारी किया गया था उत्तरदाताओं और उन्हें दाखिल करने का अवसर दिया गया

तथ्यों और उनकी दलीलों को बताते हुए शपथ पत्र। एक स्तर पर,

बहस शुरू होने के बाद उत्तरदाता संख्या 1 ने पूछा

कुछ वकीलों को शामिल करने के लिए मामले को स्थगित करना जो

उचित और मामलों में देरी करने की दृष्टि से बनाया गया था। हम उल्लेख कर सकते हैं कि पहले प्रतिवादी ने पूरी तरह से अपना तर्क दिया

कई दिनों के लिए मामला। हमारे द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया है

सभी मामलों में सामान्य प्रक्रिया का पालन किया जाता है।

12. कथित अवमानकर्ताओं के अनुसार, उपरोक्त दोनों निर्णय आई. एन. आर. ई. के लागू होने के बाद असंबद्ध हैं:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971। वे निश्चित रूप से इनक्यूरियम के अनुसार नहीं हैं क्योंकि उनका निर्णय उस कानून के आधार पर किया गया है जो स्वीकार्य रूप से मौजूद था, लेकिन इस मामले के उद्देश्यों के लिए, हम

कथित अवमानकों के तर्क को यह माना जाएगा कि निर्णय अब अच्छा कानून नहीं हैं और इस न्यायालय को बाध्य नहीं करते हैं। यह.

कथित अवमानकर्ताओं द्वारा तर्क दिया गया है कि उपरोक्त दोनों मामलों को बाद के निर्णयों द्वारा खारिज कर दिया गया है। अब हम पक्षों द्वारा उद्धृत कुछ निर्णयों का उल्लेख करेंगे।

13. पी. एन. डूडा बनाम पी. शिव शंकर प्रतिवादी, श्री

पी. शिव शिव शंकर, जो उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश थे और कानून, न्याय और कंपनी मामलों के मंत्री थे

एक भाषण दिया जिसे अपमानजनक कहा गया था। याचिकाकर्ता पी. एन. डूडा द्वारा एक याचिका दायर की गई थी जो इस न्यायालय के वकील थे लेकिन इस न्यायालय ने अवमानना कार्यवाही शुरू करने से इनकार कर दिया।

शुरुआत में, हम इस बात पर ध्यान दे सकते हैं कि अवमानना शुरू नहीं करने के कारणों को बताते हुए, हालांकि इस न्यायालय ने कहा कि अवमानना याचिका विचारणीय नहीं थी, लेकिन यह श्री पी. शिव शंकर द्वारा दिए गए भाषण के गुण-दोष पर गौर करता है और यह मानता है कि कोई आसन्न नहीं था।

न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करने और प्रशासन को बदनाम करने का खतरा। यह अभिनिर्धारित किया गया कि श्री पी. शिव शंकर इस न्यायालय की अवमानना के दोषी नहीं थे। ऐसा अभिनिर्धारित करने के बाद, न्यायालय ने यह निर्णय लिया कि क्या श्री डूडा की ओर से याचिका पर विचार किया जा सकता था। उक्त याचिका में श्री डूडा ने महान्यायवादी को पत्र लिखकर श्री पी. शिव शंकर के खिलाफ अवमानना की कार्यवाही शुरू करने के लिए सहमति मांगी थी। ए.

उक्त पत्र की प्रति भारत के सॉलिसिटर जनरल को भी भेजी गई थी। सहमति मांगते समय, याचिकाकर्ता ने यह भी कहा था कि अटॉर्नी जनरल को सहमति देने में शर्मिंदगी हो सकती है

कानून मंत्री के अभियोजन और उक्त आरोपों को ध्यान में रखते हुए, अटॉर्नी जनरल ने महसूस किया कि अटॉर्नी जनरल के कार्यालय की विश्वसनीयता और अधिकार को कम किया गया था और इसलिए अभियोजन के लिए इनकार या मंजूरी नहीं दी गई थी। अदालत ने कहा कि याचिकाकर्ता अवमानना शुरू करने के लिए अदालत का रुख नहीं कर सकता है

महान्यायवादी और महान्यायवादी की सहमति के बिना प्रतिवादी के खिलाफ कार्यवाही। संबंधित भाग

फैसला इस प्रकार हैः

" 39. अदालत की अवमानना का सवाल उठा

सी. के. डाफ्टरी बनाम के मामले में विचार। ओ पी गुप्ता।

एस. सी. आर. में।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

श्री सी. के. डाफ्टरी और तीन अन्य अधिवक्ताओं द्वारा संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत एक याचिका दायर की गई थी, जिसमें इस न्यायालय के संज्ञान में प्रतिवादियों द्वारा की गई कथित अवमानना को लाया गया था। वहाँ इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत इस न्यायालय को अपनी अवमानना के लिए दंडित करने की शक्ति है और अनुच्छेद 143 (2) के तहत वह ऐसी किसी भी अवमानना की जांच कर सकता है। इस न्यायालय ने दोहराया कि संविधान ने इस न्यायालय को मौलिक अधिकारों का संरक्षक बनाया है। इस न्यायालय ने आगे कहा कि अदालत की अवमानना के मौजूदा कानून के तहत कोई भी प्रकाशन

आवश्यक "। यह केवल इंग्लैंड में प्रचलित परिस्थितियों के आलोक में की गई एक सिफारिश थी। लेकिन यह भारत में कानून नहीं है, इस अदालत ने दोहराया। यह स्वीकार करना होगा कि निर्णय 19 मार्च, 1971 को दिया गया था और भारत में वर्तमान अधिनियम 24 दिसंबर, 1971 को पारित किया गया था। इसलिए यह निर्णय किसी भी सहायता का नहीं हो सकता है। हमने सान्याल समिति पर ध्यान दिया है। भारत में इस बारे में सिफारिशें कि महान्यायवादी को इससे क्यों जोड़ा जाना चाहिए, और उसके बाद यू. के. में 1974 में फिलिमोर समिति की रिपोर्ट थी। भारत में होने का कारण

महान्यायवादी की सहमति की जांच की गई और सान्याल समिति की रिपोर्ट द्वारा समझाया गया जैसा कि पहले देखा गया था। इन आरईः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

14. कथित अवमानकर्ताओं ने तर्क दिया कि अंतिम

उपरोक्त अनुच्छेद के भाग से पता चलता है कि निर्णय

सी. के. डाफ्टरी के मामले में (ऊपर) पहले दिया गया था

न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 के अधिनियमन अब लागू नहीं है। हालाँकि हम यह इंगित कर सकते हैं कि अगले ही समय में उसी निर्णय के अनुच्छेद में, यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया थाः

" 40. श्री गांगुली ने हमारा ध्यान इस ओर खींचा कि

वर्मा बनाम। हरगोविंद दयाल (ए. आई. आर. 1975 ऑल 52), जिसमें डिवीजन बेंच ने दोहराया कि अदालत की अवमानना के लिए कार्यवाही करने के तरीके का प्रावधान करने वाले नियम अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 के अधिनियमन के बाद भी लागू रहते हैं। इसलिए संज्ञान को स्वतः संज्ञान लिया जा सकता है और इसमें निहित जानकारी किसी निजी व्यक्ति द्वारा आवेदन का उपयोग किया जा सकता है। जैसा कि हमने यहाँ पहले उल्लेख किया है कि निश्चित रूप से संज्ञान हो सकता है

अदालत द्वारा स्वतः संज्ञान लिया जाए लेकिन जनता के सदस्यों को भी अदालत का रुख करने का अधिकार है। अदालत के ध्यान में लाने का वह अधिकार सहमति पर निर्भर है

महान्यायवादी या महान्यायवादी द्वारा दी गई और यदि उस सहमति को बिना किसी कारण के या अधिनियम की धारा 15 के तहत किसी अन्य व्यक्ति को दिए गए उस अधिकार पर विचार किए बिना रोक दिया जाता है, जिसकी जांच किसी मामले में की जा सकती है। अदालत में आवेदन किया गया "।

15. कथित अवमानकर्ता उसी में न्यायमूर्ति रंगनाथन के सहमति वाले फैसले में कुछ टिप्पणियों पर भरोसा करते हैं।डी. जी. एम. टी. जिसमें उन्होंने अनिल कुमार गुप्ता बनाम में दिल्ली उच्च न्यायालय के डी. जी. एम. टी. से निम्नलिखित मार्ग को मंजूरी दी है। के.

बाबा रावः

" कार्यालय को इस बात पर ध्यान देना है कि भविष्य में यदि कोई जानकारी अदालत की अवमानना अधिनियम या संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत कार्रवाई करने के लिए इस न्यायालय को आमंत्रित करने वाली याचिका के रूप में भी दर्ज की जाती है, जहां सूचना देने वाला उक्त अधिनियम की धारा 15 में नामित व्यक्तियों में से एक नहीं है, तो इसे याचिका के रूप में नहीं रखा जाना चाहिए और इसे न्यायिक पक्ष में प्रवेश के लिए नहीं रखा जाना चाहिए। इस तरह की याचिका को चैंबर और मुख्य न्यायाधीश में आदेश के लिए मुख्य न्यायाधीश के समक्ष रखा जाना चाहिए।

या तो स्वयं या दूसरे [2020] 8 एस. सी. आर. के परामर्श से निर्णय ले सकते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायालय के न्यायाधीशों को कोई संज्ञान लेना है या नहीं

जानकारी दी। कार्यालय को सूचना को बंद करने का निर्देश दिया जाता है "1973 की आपराधिक मूल संख्या 51" के रूप में और इसे दाखिल करने के लिए।

इसके बाद न्यायमूर्ति रंगनाथन ने निम्नलिखित आदेश दिएः

निरीक्षणः

" 54 ..... मुझे लगता है कि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया निर्देश

न्यायालय ऐसे मामलों में उचित प्रक्रिया निर्धारित करता है और हो सकता है -

कम से कम भविष्य में, एक अभ्यास दिशा के रूप में या एक नियम के रूप में अपनाया गया,

इस न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों द्वारा।

16. न्यायमूर्ति रंगनाथन द्वारा दिए गए निर्णय में उपरोक्त टिप्पणियों के आधार पर यह प्रस्तुत किया जाता है कि याचिका

प्रस्तुत करना। न्यायमूर्ति रंगनाथन ने जो टिप्पणी की वह एक आज्ञाकारी और यह पीठ का निष्कर्ष नहीं है और यह इस न्यायालय के नियमों के तहत निर्धारित प्रक्रिया नहीं है।

17. इस न्यायालय ने इस संबंध में नियम बनाए हैं जिन्हें कहा जाता है -

सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना के लिए कार्यवाही को विनियमित करने के लिए नियम न्यायालय, 1975 (संक्षेप में 'नियम') और नियमों के नियम 3 का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

" 3. अवमानना के अलावा अन्य अवमानना के मामले में

नियम 2 में निर्दिष्ट, न्यायालय कार्रवाई कर सकता है -

((क) स्वतः ही, या (ख) महान्यायवादी द्वारा की गई याचिका पर, या

महान्यायवादी, या

(ग) किसी भी व्यक्ति द्वारा की गई याचिका पर, और महाधिवक्ता या महान्यायवादी की लिखित सहमति से आपराधिक अवमानना के मामले में।

18. नियम 3 के केवल अवलोकन से पता चलता है कि अवमानना कार्यवाही शुरू करने के 3 तरीके हैं। पहला है सुओ मोटो,

दूसरा अटॉर्नी जनरल या सॉलिसिटर जनरल द्वारा की गई याचिका पर है, और तीसरा किसी भी व्यक्ति द्वारा की गई याचिका के आधार पर है और जहां आपराधिक अवमानना शामिल है तो आरई में सहमतिः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

महान्यायवादी या महान्यायवादी का होना आवश्यक है। नियम 4 और 5 में नियम 3 (बी) और 3 (सी) के तहत याचिका दायर करने का तरीका निर्धारित किया गया है। नियम 4 ए की आवश्यकताओं को निर्धारित करता है

नियम 3 (बी) और 3 (सी) और नियम 5 के तहत दायर की जाने वाली याचिका के लिए आवश्यक है कि नियम 3 (बी) या नियम 3 (सी) के तहत प्रत्येक याचिका को प्रारंभिक सुनवाई के लिए अदालत के समक्ष रखा जाएगा। नियम 6 में आरोपित व्यक्ति को फॉर्म I के संदर्भ में नोटिस देने की आवश्यकता है। नियम 6 इस प्रकार हैः

(1) आरोपित व्यक्ति को नोटिस फॉर्म I में होगा।

" 6 .

अभियुक्त व्यक्ति, जब तक कि अन्यथा आदेश नहीं दिया जाता है, कार्यवाही की सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि पर न्यायालय के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होगा, और सुनवाई के दौरान तब तक उपस्थित रहेगा जब तक कि कार्यवाही अंतिम रूप से समाप्त नहीं हो जाती है।

न्यायालय के आदेश द्वारा निपटाया गया।

(2) जब याचिका पर कार्रवाई शुरू की जाती है, तो अनुलग्नक और हलफनामों के साथ याचिका की एक प्रति होगी

आरोपित व्यक्ति की सेवा की। "

19. ये नियम उच्चतम न्यायालय द्वारा संविधान की धारा 23 के तहत निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए बनाए गए हैं।

न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 और उन्हें भारत के माननीय राष्ट्रपति के अनुमोदन से अधिसूचित किया गया है।

20. प्रीतम पाल बनाम। मध्य प्रदेश का उच्च न्यायालय,

जबलपुर ने पंजीयक के माध्यम से, इस न्यायालय की 2 न्यायाधीशों की पीठ ने फैसला सुनाया

इस प्रकार हैः

" 15. न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 से पहले, यह था

अभिनिर्धारित किया कि उच्च न्यायालय के पास एक से निपटने की अंतर्निहित शक्ति है संक्षेप में स्वयं की अवमानना और अपनी स्वयं की प्रक्रिया को अपनाना, बशर्ते कि यह अवमानकर्ता को अपना बचाव करने के लिए एक उचित और उचित अवसर प्रदान करे। लेकिन प्रक्रिया को अब संविधान की सातवीं अनुसूची की प्रविष्टि 14, सूची III द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए अधिनियम की धारा 15 द्वारा निर्धारित किया गया है। यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना का अधिकार क्षेत्र

न्यायालय और उच्च न्यायालय को कानून द्वारा विनियमित किया जा सकता है - सूची I की प्रविष्टि 77 और प्रविष्टि 14 के तहत उपयुक्त विधानमंडल

सूची III, जिसका प्रयोग करते हुए संसद ने 1971 का अधिनियम अधिनियमित किया है, सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना अधिकारिता है।

और उच्च न्यायालय को [2020] 8 एस. सी. आर. द्वारा एक संवैधानिक आधार दिया गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संविधान के अनुच्छेद 129 और 215 के तहत 'अभिलेख न्यायालय' घोषित करना और इसलिए, संविधान की अंतर्निहित शक्ति उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय को संवैधानिक संशोधन से कम किसी भी कानून द्वारा वापस नहीं लिया जा सकता है। वास्तव में,

अधिनियम की धारा 22 में कहा गया है कि इस अधिनियम के प्रावधान न्यायालय की अवमानना से संबंधित किसी अन्य कानून के प्रावधानों के अतिरिक्त होंगे और उनका अपमान नहीं करेंगे। यह अनिवार्य रूप से इस बात का अनुसरण करता है कि अनुच्छेद 129 और 215 के तहत सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के संवैधानिक अधिकार क्षेत्र को 1971 के अधिनियम में किसी भी तरह से कम नहीं किया जा सकता है।

21. दिल्ली न्यायिक सेवा संघ में, तीस हजारी न्यायालय, दिल्ली बनाम। गुजरात राज्य। इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने सुखदेव सिंह सोढ़ी (उपरोक्त) के मामले में दिए गए फैसले पर भरोसा किया और कहा कि उच्चतम न्यायालय के पास निचली अदालतों की अवमानना के लिए दंडित करने का अंतर्निहित अधिकार क्षेत्र या शक्ति है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत।

22. इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठः विनय चंद्र मिश्रा ने इस मुद्दे पर कानून पर विस्तार से चर्चा की। अदालत ने प्रतिवादी को अवमानना के लिए दोषी ठहराते हुए न केवल उसे 6 सप्ताह की अवधि के लिए साधारण कारावास की सजा सुनाई थी, जिसे निलंबित कर दिया गया था, बल्कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 और 142 के तहत इस अदालत में निहित शक्तियों पर भरोसा करते हुए उसकी वकालत को 3 साल की अवधि के लिए निलंबित कर दिया था। 23. अब हम संविधान के कुछ अन्य प्रावधानों का उल्लेख कर सकते हैं, प्रविष्टि 77, सातवीं अनुसूची की संघ सूची (सूची I) निम्नानुसार हैः

" 77. उच्चतम न्यायालय का संविधान, संगठन, अधिकारिता और शक्तियाँ (इस प्रकार की अवमानना सहित)

न्यायालय), और उसमें ली गई फीस; के हकदार व्यक्ति

उच्चतम न्यायालय के समक्ष वकालत करें। "

प्रविष्टि 14, समवर्ती सूची (सातवीं अनुसूची की सूची III)

इस प्रकार पढ़ता हैः

" 14. अदालत की अवमानना, लेकिन अवमानना सहित नहीं

उच्चतम न्यायालय "।

उपर्युक्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए अवमानना

न्यायालय अधिनियम, 1971 संसद द्वारा अधिनियमित किया गया था। आरई में धारा 15:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

आपराधिक अवमानना के संज्ञान से संबंधित है और धारा 15 के शुरुआती हिस्से में स्पष्ट रूप से प्रावधान है कि उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय उच्च न्यायालय के मामले में महाधिवक्ता द्वारा लाए गए प्रस्ताव पर कार्रवाई कर सकते हैं (i) स्वतः संज्ञान (ii)।

उच्चतम न्यायालय के मामले में न्यायालय या महान्यायवादी/महान्यायवादी और (iii) किसी अन्य व्यक्ति की याचिका पर

यथास्थिति महाधिवक्ता/महान्यायवादी/महान्यायवादी की लिखित सहमति के साथ। धारा 17 महाधिवक्ता/महान्यायवादी/महान्यायवादी द्वारा पेश किए गए प्रस्ताव पर या उनकी सहमति के आधार पर कार्रवाई करने के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को निर्धारित करती है और धारा 17 (2) स्वतः संज्ञान अवमानना से संबंधित नहीं है। याचिकाएँ। अदालत की अवमानना अधिनियम की धारा 17 (2) (ए) स्वतः संज्ञान याचिकाओं पर लागू नहीं होगी क्योंकि यह एक प्रस्ताव पर पेश की गई कार्यवाही से संबंधित है न कि स्वतः संज्ञान याचिकाओं पर।

मोटु कार्यवाही। धारा 17 (2) (बी) अधीनस्थ न्यायालय द्वारा दिए गए संदर्भ पर शुरू की गई अवमानना से संबंधित है। केवल इन मामलों में प्रस्ताव की एक प्रति के साथ नोटिस जारी करने की आवश्यकता होती है। जहाँ तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, इन मामलों में इस न्यायालय के नियमों के नियम 6 के अनुसरण में बनाए गए प्रपत्र I की एकमात्र आवश्यकता यह है कि अवमानना की संक्षिप्त प्रकृति उसमें बताई जानी चाहिए।

24. विनय चंद्र मिश्रा के मामले (उपरोक्त) में फैसले की शुद्धता पर इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम. भारत संघ। हम उस फैसले के कुछ हिस्सों का विस्तार से उल्लेख करेंगे। यह कि संविधान पीठ का निर्णय बाध्यकारी है और अन्य सभी निर्णय जो इसके विपरीत विचार रखते हैं, उन्हें सही नहीं कहा जा सकता है। निर्णय पर विचार करने से पहले, न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 के कुछ प्रावधानों का उल्लेख करना उचित होगा। धारा 2 "अदालत की अवमानना", "दीवानी अवमानना", "आपराधिक अवमानना" और "उच्च न्यायालय" को परिभाषित करने वाला परिभाषा खंड है।

धारा 3 से 5 निर्दोष प्रकाशन, न्यायिक कार्यवाही की निष्पक्ष और सटीक रिपोर्टिंग और निष्पक्ष आलोचना से संबंधित है।

न्यायिक अधिनियम, जो अवमानना के बराबर नहीं है। धारा 10 और 11 जे. पी. आर. ई. एम. ई. कोर्ट रिपोर्ट को दंडित करने के लिए उच्च न्यायालय की शक्तियों से संबंधित हैं।

अपमान के लिए। धारा 12 (2) में प्रावधान है कि कोई भी अदालत धारा 12 की उप-धारा (1) में निर्दिष्ट सजा से अधिक सजा नहीं देगी। धारा 13 में प्रावधान है कि किसी भी अदालत को अवमानना के लिए अधिनियम के तहत सजा तब तक नहीं देनी चाहिए जब तक कि यह संतुष्ट न हो कि अवमानना ऐसी प्रकृति की है कि यह न्याय के नियत पाठ्यक्रम में काफी हद तक हस्तक्षेप करती है या काफी हद तक हस्तक्षेप करती है। इसमें यह भी प्रावधान है कि सत्य को एक वैध बचाव के रूप में उठाए जाने की अनुमति दी जा सकती है यदि अदालत संतुष्ट है कि बचाव जनहित में उठाया गया है और एक प्रामाणिक बचाव है। धारा 14 उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालयों की अदालत की अवमानना से निपटने की शक्तियों से संबंधित है। हम पहले ही धारा 15 पर विचार कर चुके हैं जो इसके संज्ञान से संबंधित है

न्यायालय के समक्ष अवमानना के अलावा आपराधिक अवमानना। धारा 17 प्रक्रिया को इसके बाद निर्धारित करती है।

संज्ञान। इस अधिनियम की पृष्ठभूमि में ही हमें संविधान पीठ के फैसले को पढ़ना और उसका विश्लेषण करना है।

25. संविधान पीठ ने प्रावधानों का उल्लेख किया

भारत के संविधान के अनुच्छेद 129 और सातवीं अनुसूची की सूची I की प्रविष्टि 77 और सातवीं अनुसूची की सूची III की प्रविष्टि 14 और उसके बाद, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गयाः

" 18. सूची I और प्रविष्टि की प्रविष्टि 77 की भाषा

14 सातवीं अनुसूची की सूची III से पता चलता है कि

संसद और राज्य की विधायी शक्ति

उच्चतम न्यायालय द्वारा न्यायालय की अवमानना से जुड़ा हुआ या उच्च न्यायालय, हालांकि, योग्यता के अधीन

अवमानना के लिए दंडित करने की सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति अनुच्छेद 129 के तहत या उस शक्ति को किसी अन्य में निहित करें

अदालत "।

(जोर दिया गया)

26. यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 का उल्लेख करता है निम्नलिखित रूप में आयोजित किया गयाः

" 21. इस प्रकार यह देखा जाता है कि इस न्यायालय की शक्ति

किसी की जाँच या सजा के संबंध में स्वयं की अवमानना सहित अवमानना, स्पष्ट रूप से आरई में की गई हैः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अवमानना के लिए दंडित करने के लिए अभिलेख न्यायालय की अंतर्निहित अधिकारिता और संसद की कानून बनाने की शक्ति

इसलिए, विषय का प्रयोग इस तरह से नहीं किया जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय और/या उच्च न्यायालयों की स्थिति और गरिमा को कम किया जा सके, हालांकि ऐसा विधान सजा की प्रकृति के निर्धारण के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में काम कर सकता है जिसे यह न्यायालय स्थापित अवमानना के मामले में लागू कर सकता है। संसद ने स्वयं की अवमानना की जांच और सजा के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियों से संबंधित कोई कानून नहीं बनाया है (हम बाद में न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 15 का उल्लेख करेंगे) और इसलिए यह न्यायालय अनुच्छेद 129 के तहत निहित शक्तियों के आधार पर अपनी अवमानना के लिए जांच करने और दंडित करने की शक्ति का प्रयोग करता है।

और भारत के संविधान की धारा 142 (2)।

27. इस न्यायालय ने तब न्यायालय अवमान अधिनियम, 1926, न्यायालय अवमान अधिनियम, 1952 के प्रावधान का संदर्भ दिया।

घ न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 और उसके बाद के रूप में अभिनिर्धारित किया गया

नीचेः

" 29. 1971 के अधिनियम की धारा 2 की तरह धारा 10

1926 अधिनियम और 1952 अधिनियम की धारा 4 शक्ति को मान्यता देती है।

जिसके लिए उच्च न्यायालय के पास पहले से ही अभिलेख न्यायालय के रूप में अधिकार है

स्वयं की अवमानना के लिए दंडित करना, जो अब अधिकार क्षेत्र में है

अनुच्छेद 215 के आधार पर भी संविधान की मंजूरी। द.

हालाँकि, अधिनियम अवमानना करने के लिए अवमानना करने वाले पर मुकदमा चलाने या दंडित करने की सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियों से संबंधित नहीं है।

उच्चतम न्यायालय या उसके अधीनस्थ न्यायालय और

संविधान के अनुच्छेद 142 (2) और 129 में निहित संवैधानिक प्रावधान

केवल संविधान ही इस विषय से संबंधित है।

28. निम्नलिखित का उल्लेख करना भी उचित होगा।

संविधान पीठ की टिप्पणियाँः

" 38. जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, संसद प्रविष्टि 77 सूची I के आधार पर [2020] 8 एस. सी. आर. से संबंधित कानून बनाने में सक्षम है।

अग्रिम न्यायालय की रिपोर्ट

अवमानना के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियाँ

स्वयं और ऐसा कानून दंड की प्रकृति निर्धारित कर सकता है जो अनुच्छेद 142 (2) के साथ पठित अनुच्छेद 129 के प्रावधानों के आधार पर किसी अवमानक पर लगाया जा सकता है। चूँकि संसद द्वारा ऐसा कोई कानून नहीं बनाया गया है, इसलिए न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971 के तहत निर्धारित सजा की प्रकृति सर्वोच्च न्यायालय के लिए एक मार्गदर्शक के रूप में कार्य कर सकती है, लेकिन

उस अधिनियम के तहत निर्धारित सजा की सीमा केवल उच्च न्यायालयों पर लागू हो सकती है, क्योंकि 1971 का अधिनियम वास्तव में सर्वोच्च न्यायालय की अवमानना के अधिकार क्षेत्र से संबंधित नहीं है, सिवाय इसके कि अधिनियम की धारा 15

उच्चतम न्यायालय द्वारा भी आपराधिक अवमानना का संज्ञान लेने के लिए प्रक्रियात्मक तरीका निर्धारित करता है। तथापि, धारा 15 अवमानना अधिकारिता प्रदान करने वाला एक ठोस प्रावधान नहीं है। सुखदेव सिंह मामले में निर्णय (ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 186:1954 एस. सी. आर. 454) "अधिकतम सजा" की सीमा के संबंध में है जो किसी व्यक्ति पर लगाई जा सकती है। अतः अवमानकर्ता का यह अर्थ लगाया जाना चाहिए कि वह केवल उच्च न्यायालयों की शक्तियों से संबंधित है और इस न्यायालय की शक्तियों से संबंधित नहीं है।

जो दंड उच्चतम न्यायालय अपनी और/या अधीनस्थ न्यायालयों की अवमानना के लिए दंड देने की अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए लगा सकता है, वह भी केवल अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 के तहत निर्धारित सीमा तक ही हो सकता है। हालाँकि, हम उस प्रश्न पर कोई अंतिम राय व्यक्त नहीं करते हैं क्योंकि वह मुद्दा, कड़ाई से बोलते हुए, इस मामले में हमारे निर्णय के लिए उत्पन्न नहीं होता है। सजा की सीमा पर प्रतिबंध या सीमा के बारे में प्रश्न, जिसे यह न्यायालय अपनी अवमानना का प्रयोग करते हुए प्रदान कर सकता है

अधिकारिता का निर्णय एक उचित मामले में किया जा सकता है, जब ऐसा उठाया जाता है।

XXXXXXXX

" 40 ..... अनुच्छेद 129 बार काउंसिल की अनुशासन समिति के अधिकार क्षेत्र को नहीं ले सकता है।

राज्य या बार काउंसिल ऑफ इंडिया किसी वकील को उसके लाइसेंस को निलंबित करके दंडित करने के लिए, कौन सी सजा केवल "पेशेवर कदाचार" के निष्कर्ष के बाद ही दी जा सकती है।

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अधिवक्ताओं के अधीन विहित तरीके से अभिलिखित

अधिनियम और उसके तहत बनाए गए नियम।

XXXXXXXX

" 43. अदालत की अवमानना के लिए दंडित करने की सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति, हालांकि काफी व्यापक है, फिर भी सीमित है और निर्धारित करने की शक्ति को शामिल करने के लिए विस्तारित नहीं किया जा सकता है

क्या कोई वकील भी "पेशेवर" का दोषी है

दुराचार "एक संक्षिप्त तरीके से, एक जाने देना-द्वारा अधिवक्ता अधिनियम के तहत निर्धारित प्रक्रिया। शक्ति।

अनुच्छेद 142 के तहत पूर्ण न्याय करना एक तरह से है, सुधारात्मक शक्ति, जो कानून पर समानता को प्राथमिकता देती है, लेकिन इसका उपयोग किसी पेशेवर वकील को संक्षिप्त तरीके से वकालत करने के लिए उसके लाइसेंस को निलंबित करके अधिवक्ता अधिनियम, 1961 में निहित उचित प्रक्रिया से वंचित करने के लिए नहीं किया जा सकता है।

न्यायालय की अवमानना के मामले से निपटते हुए "।

XXXXXXXX

" 57. एक मामले में, एक वकील को दोषी पाया गया

न्यायालय की अवमानना करना भी दोषी हो सकता है

"पेशेवर दुराचार" करना, उसके दूषित आचरण की गंभीरता या प्रकृति के आधार पर, लेकिन दोनों क्षेत्राधिकार अलग और विशिष्ट हैं और इसके द्वारा प्रयोग किए जा सकते हैं -

अलग-अलग और विशिष्ट मंचों का अनुसरण करते हुए प्रक्रियाएँ। किसी अधिवक्ता को उसके लाइसेंस को निलंबित करके या सिद्ध पेशेवर कदाचार के लिए राज्य बार काउंसिल की सूची से उसका नाम हटाकर दंडित करने की शक्ति विशेष रूप से अधिवक्ता अधिनियम, 1961 के तहत बनाए गए वैधानिक प्राधिकरणों में निहित है, जबकि अदालत की अवमानना करने के लिए उसे दंडित करने का अधिकार क्षेत्र विशेष रूप से

अदालतें "।

29. संविधान पीठ के फैसले का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करने से इस बात में कोई संदेह नहीं है कि अधिनियम की धारा 15 एक गैर-कानूनी प्रावधान है।

अवमानना अधिकारिता प्रदान करने वाला अस्थायी प्रावधान। द.

प्रतिस्थापन पीठ ने अंततः इस सवाल को छोड़ दिया कि क्या अधिनियम द्वारा निर्धारित अधिकतम सजा सर्वोच्च न्यायालय को खुली रखने के लिए बाध्य करती है। पैरा 38 में उल्लिखित टिप्पणियाँ -यह स्पष्ट रूप से

इंगित करता है कि संविधान पीठ ने कहा था कि अधिनियम में निर्धारित सजा केवल [2020] 8 एस. सी. आर. हो सकती है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट दिशानिर्देश और कुछ नहीं। इस निर्णय में की गई कुछ टिप्पणियों को कि न्यायालय ने विनय चंद्र मिश्रा के मामले (उपरोक्त) में 3 साल की अवधि के लिए वकालत के अधिकार को छीनकर अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है, इस संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 129 किसी अधिवक्ता को दंडित करने के लिए राज्य की बार काउंसिल या भारतीय बार काउंसिल के अधिकार क्षेत्र को नहीं ले सकता है। हमारी राय में इन टिप्पणियों को ऊपर उद्धृत अन्य टिप्पणियों के साथ पढ़ा जाना चाहिए जो स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि संविधान पीठ ने कहा कि "संसद ने उच्चतम न्यायालय की शक्तियों से संबंधित कोई कानून नहीं बनाया है -

स्वयं की अवमानना की जांच और सजा '। न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि धारा 15 अवमानना अधिकारिता प्रदान करने वाला एक मूल प्रावधान नहीं है और इसलिए, विशेष रूप से जहां तक स्वतः संज्ञान अवमानना का संबंध है, यह केवल एक प्रक्रियात्मक धारा है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि अवमानना के लिए दंडित करने की सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियां अधिनियम के प्रावधानों के अधीन नहीं हैं। इसलिए, एकमात्र आवश्यकता एक ऐसी प्रक्रिया का पालन करना है जो न्यायसंगत, निष्पक्ष और इस न्यायालय द्वारा बनाए गए नियमों के अनुसार हो।

30. जहाँ तक मामले में की गई टिप्पणियों का संबंध है

पल्लव सेठ बनाम। अभिरक्षक 10 का संबंध है, उस मामले में यह न्यायालय केवल इस प्रश्न पर विचार कर रहा था कि क्या अवमानना अवमानना में निर्धारित सीमा के बाद शुरू की जा सकती है।

न्यायालय अधिनियम की अवधि समाप्त हो गई है और उसमें की गई टिप्पणियों को केवल उसी संदर्भ में पढ़ा जाना चाहिए। पल्लव सेठ के मामले (ऊपर) के पैरा 30 का प्रासंगिक भाग इस प्रकार हैः

" 30. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि यह न्यायालय और

निरस्त या विक्षिप्त किया जाए। लेकिन अगर अनुच्छेद 129 और अनुच्छेद 215 के तहत शक्ति निरपेक्ष है तो क्या कोई कानून हो सकता है? किस तरह और किस हद तक शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है? यदि कानून का कोई प्रावधान है जो अनुच्छेद 129 और/या अनुच्छेद 215 के तहत शक्ति को बाधित या निरस्त करता है, तो इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि इस तरह के कानून को वैध रूप से अधिनियमित नहीं माना जाना चाहिए। हालाँकि, यह आरई में:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

हमें ऐसा प्रतीत होता है कि अवमानना के कृत्यों के रूप में या यहां तक कि अवमानना के लिए कार्यवाही शुरू करने के लिए सीमा की अवधि के प्रावधान के रूप में दंड की मात्रा का प्रावधान एक ऐसे प्रावधान के रूप में नहीं लिया जा सकता है जो संविधान के अनुच्छेद 129 या अनुच्छेद 215 के तहत अवमानना क्षेत्राधिकार को निरस्त या बाधित करता है।

उपरोक्त निष्कर्ष स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि कोई भी कानून जो संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत सर्वोच्च न्यायालय या संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत उच्च न्यायालयों की शक्ति को कम करता है या निरस्त करता है, उसे वैध रूप से अधिनियमित नहीं कहा जा सकता है। हालाँकि, इसने यह माना कि सजा की मात्रा या सीमा की अवधि प्रदान करने का मतलब यह नहीं होगा कि अनुच्छेद के तहत न्यायालय की शक्तियाँ।

129 बहिष्कृत या निरस्त कर दिए गए हैं। हम इस निर्णय की शुद्धता या अन्यथा में नहीं जा रहे हैं, लेकिन यह स्पष्ट है कि यह निर्णय केवल इस मुद्दे से संबंधित है कि क्या संसद अधिनियम के तहत कार्यवाही शुरू करने के लिए सीमा की अवधि तय कर सकती है। एक तरह से टिप्पणी किए बिना या दूसरा पल्लव सेठ के मामले (ऊपर) पर यह स्पष्ट है कि इसने इस न्यायालय की स्वतः जारी करने की शक्तियों पर विचार नहीं किया है।

अवमानना का मोटो नोटिस।

प्रक्रिया में प्रावधान है कि अवमानना शुरू करने के तीन तरीके हैं-(i) स्वतः संज्ञान (ii) अधिवक्ता द्वारा प्रस्ताव पर। महाधिवक्ता/महान्यायवादी/महान्यायवादी और (iii) महाधिवक्ता/महान्यायवादी/महान्यायवादी की लिखित सहमति से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा दायर याचिका के आधार पर। जहाँ तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, किसी की सहमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि न्यायालय अवमानना के लिए नोटिस जारी करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर रहा है। यह न केवल अधिनियम के प्रावधानों से स्पष्ट है, बल्कि इस न्यायालय द्वारा निर्धारित नियमों से भी स्पष्ट है।

18. संविधान पीठों सहित इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों के अवलोकन से यह देखा जा सकता है कि

अवमानना की कार्रवाई के लिए इस न्यायालय की शक्ति अनुच्छेद 129 के तहत है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि अवमानना शुरू करने की इस न्यायालय की शक्ति किसी भी तरह से न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 के प्रावधानों द्वारा सीमित नहीं है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय अवमानना से निपटने के लिए संवैधानिक शक्तियों के साथ निहित है और धारा 15 अवमानना के लिए नोटिस जारी करने की शक्ति का स्रोत नहीं है। यह केवल उस प्रक्रिया का प्रावधान करता है जिसमें इस तरह की अवमानना शुरू की जानी है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, न्यायालय अपने द्वारा प्राप्त जानकारी के आधार पर स्वतः संज्ञान लेते हुए कार्यवाही शुरू कर सकता है। एकमात्र आवश्यकता यह है कि पी. एन. डूडा (उपरोक्त) के निर्णय में निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए। वर्तमान मामले में, निस्संदेह इसका पालन किया गया है। यह भी समान रूप से तय किया गया है कि जहां तक स्वतः संज्ञान याचिकाओं का संबंध है, किसी की सहमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है, जिसमें विद्वान महान्यायवादी भी शामिल हैं, क्योंकि न्यायालय अवमानना के लिए नोटिस जारी करने के लिए अपनी अंतर्निहित शक्तियों का प्रयोग कर रहा है। यह समान रूप से अच्छी तरह से तय किया गया है कि एक बार जब न्यायालय संज्ञान लेता है, तो मामला विशुद्ध रूप से न्यायालय और अवमानक के बीच होता है। एकमात्र

आवश्यकता यह है कि अपनाई जाने वाली प्रक्रिया न्यायपूर्ण और निष्पक्ष और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार होनी चाहिए। वर्तमान में

मामले में, कथित अवमानकों को जारी किए गए नोटिस में स्पष्ट रूप से उन ट्वीट्स का उल्लेख किया गया है जिनके आधार पर अदालत स्वतः संज्ञान ले रही है। कथित अवमानकर्ता संख्या 1 ने उस आधार को भी स्पष्ट रूप से समझा है जिसके आधार पर न्यायालय उनके खिलाफ कार्यवाही कर रहा है जैसा कि उनके द्वारा दायर विस्तृत हलफनामे-इन-जवाब से स्पष्ट है।

19. इससे पहले कि हम वर्तमान मामले के तथ्यों का विज्ञापन करें, आइए

इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों में उल्लिखित कानूनी स्थिति की जांच करें।

20. ब्रह्मा प्रकाश शर्मा (उपरोक्त) के मामले में संविधान पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी की:

" यह किसी भी विवाद को स्वीकार नहीं करता है कि अपने अधिकार की अवमानना को दंडित करने में वरिष्ठ न्यायालयों द्वारा प्रयोग की जाने वाली संक्षिप्त अधिकारिता न्याय के पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप को रोकने और अदालतों में प्रशासित कानून के अधिकार को बनाए रखने के उद्देश्य से मौजूद है। यह केवल वही दोहराना होगा जो विभिन्न न्यायाधीशों द्वारा इतनी बार कहा गया है कि अवमानना कार्यवाही का उद्देश्य न्यायाधीशों को व्यक्तिगत रूप से उन आरोपों से सुरक्षा प्रदान करना नहीं है जिन पर आई. एन. आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

उन्हें व्यक्तियों के रूप में उजागर किया जा सकता है; इसका उद्देश्य जनता के लिए एक सुरक्षा होना है जिनके हित बहुत अधिक प्रभावित होंगे यदि किसी भी पक्ष के कार्य या आचरण से न्यायालय का अधिकार कम हो जाता है और उसके द्वारा न्याय के प्रशासन में लोगों के विश्वास की भावना कमजोर हो जाती है।

21. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि संविधान पीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि दंड देने में उच्च न्यायालयों द्वारा प्रयोग की जाने वाली संक्षिप्त अधिकारिता

उनके अधिकार की अवमानना न्याय के पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप को रोकने और अदालतों में प्रशासित कानून के अधिकार को बनाए रखने के उद्देश्य से मौजूद है; कि अवमानना कार्यवाही का उद्देश्य न्यायाधीशों को व्यक्तिगत रूप से उन आरोपों से सुरक्षा प्रदान करना नहीं है जिन पर वे व्यक्तिगत रूप से उजागर हो सकते हैं। यह हो चुका है

अभिनिर्धारित किया कि इसका उद्देश्य जनता के लिए एक सुरक्षा होना है जिसके हित बहुत अधिक प्रभावित होंगे यदि किसी पक्ष के कार्य या आचरण से न्यायालय का अधिकार कम हो जाता है और उसके द्वारा न्याय के प्रशासन में लोगों के विश्वास की भावना कमजोर हो जाती है। संविधान पीठ ने आगे कहाः

" वास्तव में ऐसे असंख्य तरीके हैं जिनके द्वारा न्यायालयों में न्याय के उचित प्रशासन में बाधा डालने या बाधा डालने के प्रयास किए जा सकते हैं। इस तरह का एक प्रकार का हस्तक्षेप उन मामलों में पाया जाता है जहां कोई कार्य या प्रकाशन होता है जो "स्वयं अदालत को बदनाम करने के बराबर होता है" एक ऐसी अभिव्यक्ति जो अंग्रेजी वकीलों से परिचित है।

लार्ड हार्डविक के दिनों से [पुनः पढ़ें और पढ़ें]

हगनसन, (1742) 2 एटक। 469 , 471] . यह अपमान विभिन्न तरीकों से प्रकट हो सकता है, लेकिन वास्तव में, यह न्यायाधीशों के चरित्र या क्षमता पर अनुचित और मानहानिकारक आक्षेप लगाने वाले विशेष मामलों के संदर्भ के साथ या उनके बिना व्यक्तिगत न्यायाधीशों या समग्र रूप से न्यायालय पर हमला है। इस तरह के आचरण को इस कारण से अवमानना के रूप में दंडित किया जाता है कि यह लोकप्रिय दिमाग में अविश्वास पैदा करता है और अदालतों में लोगों के विश्वास को कम करता है जो वादियों के लिए उनके अधिकारों और स्वतंत्रता की सुरक्षा में प्रमुख महत्व रखते हैं।

22. संविधान पीठ इस प्रकार यह अभिनिर्धारित करती है कि एक प्रकाशन जो व्यक्तिगत न्यायाधीशों या समग्र रूप से अदालत पर हमला करता है

न्यायाधीशों के चरित्र या क्षमता पर अनुचित और मानहानिकारक आक्षेप लगाने वाले विशेष मामले का संदर्भ, न्यायालय को बदनाम करने की अवधि के भीतर आएगा। यह माना जाता है कि इस तरह का आचरण लोकप्रिय दिमाग में अविश्वास पैदा करता है और [2020] 8 एस. सी. आर. के आत्मविश्वास को कम करता है।

अदालतों में लोग, जो वादियों के लिए उनके अधिकारों और स्वतंत्रताओं की सुरक्षा में प्रमुख महत्व के हैं। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि सकारात्मक रूप से साबित करना आवश्यक नहीं है कि एक वास्तविक हस्तक्षेप हुआ है ऐसे मानहानिकारक कथन के कारण न्याय प्रशासन के साथ और यह पर्याप्त है यदि यह न्याय के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करने की संभावना है, या किसी भी तरह से प्रवृत्त है।

23. हीरा लाल दीक्षित और दो अन्य के मामले में संविधान पीठ अदालत में वितरित एक पर्चे पर विचार कर रही थी

उक्त हीरा लाल दीक्षित द्वारा मुद्रित और प्रकाशित परिसर। वे उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन अधिनियम, 1951 की वैधता को चुनौती देने वाली उच्चतम न्यायालय में दायर रिट याचिकाओं में से एक में आवेदक थे। हालांकि पर्चे में राज्य के अधिकारियों और तत्कालीन राज्य परिवहन मंत्री द्वारा एक यात्री बस के संबंध में उनके लाइसेंस को रद्द करने और अंततः बहाल करने के संबंध में लेखक को दिए गए उत्पीड़न और अपमान का एक ग्राफिक विवरण था, जिसमें निम्नलिखित अंश भी थाः

" जनता को उच्चतम न्यायालय में पूरा और दृढ़ विश्वास है, लेकिन जो सूत्र जानते हैं उनका कहना है कि सरकार उन माननीय न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में पक्षपात के साथ कार्य करती है

राजदूत, राज्यपाल, उच्चायुक्त आदि, जो सरकार के खिलाफ निर्णय देते हैं, लेकिन इससे अब तक माननीय न्यायाधीशों की दृढ़ता और न्याय में कोई फर्क नहीं पड़ा है।

उक्त मामले में संविधान पीठ के निम्नलिखित अवलोकन को संदर्भित करना प्रासंगिक होगाः

" प्रत्यर्थी के विद्वान वकील हीरालाल दीक्षित ने कहा कि विचाराधीन अंश पूरी तरह से हानिरहित था और केवल न्यायालय के प्रति एक प्रशंसनीय भावना व्यक्त करता है और इस तरह

चापलूसी संभवतः इस प्रतिष्ठित न्यायाधिकरण के न्यायाधीशों के दिमाग पर थोड़ा भी प्रभाव नहीं डाल सकती थी। हमें नहीं लगता कि चापलूसी एकमात्र या मुख्य उद्देश्य था जिसके साथ यह मार्ग था।

लिखित या जिसके साथ यह उस समय प्रकाशित किया गया था जब अपीलों की सुनवाई चल रही थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि यह इस न्यायालय में जनता के विश्वास की घोषणा के साथ शुरू होता है, लेकिन इसके तुरंत बाद महत्वपूर्ण संयोजन "लेकिन" द्वारा पहले के शब्दों से जुड़े अन्य शब्द। इसके बाद आने वाले शब्द इस प्रभाव के लिए हैं कि जो स्रोत जानते हैं उनका कहना है कि सरकार इसके साथ काम करती है

प्रशांत भूषण और एएनआर।

राजदूत, राज्यपाल, उच्चायुक्त आदि के रूप में उन न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में पक्षपात, जो सरकार के खिलाफ निर्णय देते हैं। इन शब्दों का स्पष्ट अर्थ यह है कि जो न्यायाधीश सरकार के खिलाफ निर्णय लेते हैं, उन्हें ये उच्च नियुक्तियां नहीं मिलती हैं। इन शब्दों का आवश्यक निहितार्थ यह है कि सरकार के पक्ष में निर्णय लेने वाले न्यायाधीशों को सरकार द्वारा इन शब्दों से पुरस्कृत किया जाता है।

नियुक्तियाँ। इस प्रकार सरकार के दृष्टिकोण को निश्चित रूप से एक उद्देश्य के साथ चित्रित किया गया है और इसका उद्देश्य पाठकों के मन में यह भावना पैदा करना है कि सरकार

भविष्य में रोजगार की उच्च आशाओं को ध्यान में रखते हुए, न्यायाधीशों को अपने पक्ष में निर्णय देने के लिए प्रोत्साहित करता है। यह आक्षेप निम्नलिखित शब्दों से प्रकट होता है, अर्थात्, "इससे अब तक माननीय न्यायाधीशों की दृढ़ता और न्याय में कोई अंतर नहीं आया है"। इन शब्दों को "लेकिन" के संयोजन से पिछले शब्दों के साथ जोड़ने से पहले के शब्दों के वास्तविक महत्व और सही अर्थ में राहत मिलती है। समग्र रूप से पढ़ा गया अंश स्पष्ट रूप से इसके बराबर है: " सरकार उन न्यायाधीशों को नापसंद करती है जो इसके खिलाफ निर्णय देते हैं लेकिन उच्च नियुक्तियों वाले न्यायाधीशों का पक्ष लेते हैं जो

इसके पक्ष में निर्णय लें: कि यद्यपि इसकी गणना न्यायाधीशों को लुभाने के लिए की गई है

सरकार के पक्ष में निर्णय देने के लिए इसने अब तक न्यायाधीशों की दृढ़ता और न्याय में कोई बदलाव नहीं किया है। "अब तक" शब्द महत्वपूर्ण हैं। हम पूछते हैं कि इस परिच्छेद को लिखने का उद्देश्य क्या था और वितरण का उद्देश्य क्या था?

न्यायालय परिसर में उस समय पत्रक की जब न्यायालय अपीलों की सुनवाई कर रहा था? निश्चित रूप से, अपमानजनक अंश में एक चेतावनी छिपी हुई थी कि हालांकि न्यायाधीश "अब तक" दृढ़ रहे हैं और निर्णय लेने के प्रलोभन का विरोध किया है।

उच्च नियुक्तियाँ प्राप्त करने की उम्मीद में सरकार के पक्ष में मामले, फिर भी, यदि वे पक्ष में निर्णय लेते हैं

सरकार को इस अवसर पर जानकार लोगों को पता चल जाएगा कि उन्होंने प्रलोभन के आगे घुटने टेक दिए थे और फैसला दिया था

मार्ग में उल्लिखित प्रकार की उच्च नियुक्तियों के रूप में भविष्य में पुरस्कार की उम्मीद में सरकार के पक्ष में। इस अनुच्छेद को लिखने और विशेष रूप से इसे वास्तव में किए जाने के समय प्रकाशित करने का उद्देश्य स्पष्ट रूप से न्यायाधीशों के दिमाग को प्रभावित करना और उन्हें अपने कर्तव्यों के सख्त प्रदर्शन से विचलित करना था। अपमानजनक मार्ग और इसके प्रकाशन का समय और स्थान निश्चित रूप से न्याय के उचित प्रशासन में बाधा या बाधा डालने की प्रवृत्ति रखता है और यह अदालत की अवमानना है। "[2020] 8 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

संविधान पीठ के उपरोक्त अवलोकन के अवलोकन से पता चलता है कि हालांकि उक्त परिच्छेद/अनुच्छेद एक के साथ शुरू होता है बयान, कि 'जनता को सर्वोच्च न्यायालय में पूर्ण और दृढ़ विश्वास है' और इसके साथ समाप्त होता है, लेकिन इससे अभी तक माननीय न्यायाधीशों की दृढ़ता और न्याय में कोई फर्क नहीं पड़ा है ', अदालत ने पाया कि यदि उक्त परिच्छेद/पैराग्राफ में बयान को पूरी तरह से पढ़ा गया था और जिस समय और तरीके से इसे प्रकाशित किया गया था, तो यह स्पष्ट था कि यह न्यायाधीशों के दिमाग को प्रभावित करने और उन्हें सख्त से भटकाने के लिए किया गया था।

अपने कर्तव्यों का पालन करना। न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि आपत्तिजनक मार्ग और इसके प्रकाशन का समय और स्थान निश्चित रूप से न्याय के उचित प्रशासन में बाधा या बाधा डालने की प्रवृत्ति रखता है और यह न्यायालय की अवमानना थी।

उन्हें दोषी ठहराते हुए और उनकी योग्य माफी को खारिज करते हुए, संविधान पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

" यह अच्छी तरह से स्थापित है, जैसा कि इस न्यायालय ने ब्रह्मा प्रकाश शर्मा और अन्य बनाम में कहा था। उत्तर प्रदेश राज्य (ऊपर), कि यह आवश्यक नहीं है कि वास्तव में एक होना चाहिए

न्याय के प्रशासन के पाठ्यक्रम में वास्तविक हस्तक्षेप लेकिन यह पर्याप्त है यदि अपमानजनक प्रकाशन की संभावना है या यदि यह किसी भी तरह से कानून के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है। प्रश्नगत परिच्छेद में निहित ऐसे आक्षेप न्यायालय की गरिमा के लिए अपमानजनक हैं और न्यायाधीशों की सत्यनिष्ठा में लोगों के विश्वास को कम करने के लिए गणना की जाती है। चाहे उस परिच्छेद को इस न्यायालय के न्यायाधीशों की पूर्ण चापलूसी के रूप में पढ़ा जाए या ऊपर उल्लिखित आक्षेपों वाले के रूप में पढ़ा जाए या शेष पत्रक जिसमें लंबित कार्यवाही के किसी पक्ष पर हमला शामिल है, को अलग से लिया जाए, यह न्यायालय की समान रूप से अवमानना है कि इसे लिखने का उद्देश्य और इसके प्रकाशन का समय और स्थान अदालत को अपने सख्त कर्तव्य का पालन करने से विचलित करने के लिए था, या गणना की गई थी, या तो चापलूसी द्वारा या परोक्ष धमकी या चेतावनी द्वारा या इसके संदर्भ में पूर्वाग्रह पैदा करके।

राज्य के खिलाफ विचार करें। इसलिए, हमारी स्पष्ट राय है और हमारा मानना है कि प्रत्यर्थी हीरालाल दीक्षित ने पर्चा लिखकर और विशेष रूप से प्रश्नगत अंश को और इसे उस समय और स्थान पर प्रकाशित करके इस न्यायालय की घोर अवमानना की है और अपने हलफनामे में निहित और अपने वकील के माध्यम से दोहराए गए योग्य माफी को पर्याप्त नहीं माना जा सकता है।

अपने दुराचार के लिए सुधार करता है। " इन आरईः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

उपरोक्त पैराग्राफ के अवलोकन से पता चलेगा कि यह न्यायालय ब्रह्मा प्रकाश शर्मा (उपरोक्त) में निर्धारित कानून को दोहराता है। अभिनिर्धारित किया कि यह आवश्यक नहीं है कि वास्तव में न्याय के प्रशासन के पाठ्यक्रम में वास्तविक हस्तक्षेप होना चाहिए, लेकिन यह पर्याप्त है यदि अपमानजनक प्रकाशन की संभावना है या यदि यह किसी भी तरह से कानून के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है। प्रश्नगत परिच्छेद में निहित ऐसे आक्षेप न्यायालय की गरिमा के लिए अपमानजनक हैं और न्यायाधीशों की सत्यनिष्ठा में लोगों के विश्वास को कम करने के लिए गणना की जाती है। यह भी अभिनिर्धारित किया जाता है कि चाहे उस परिच्छेद को इस न्यायालय के न्यायाधीशों की पूर्ण चापलूसी के रूप में पढ़ा जाए या आक्षेप युक्त के रूप में पढ़ा जाए या शेष पत्रक जिसमें लंबित कार्यवाही के किसी पक्ष पर हमला शामिल है, को अलग से लिया जाए, यह न्यायालय की अवमानना है क्योंकि इसे लिखने का उद्देश्य और इसके प्रकाशन के समय और स्थान की गणना न्यायालय को विचलित करने के लिए की गई थी।

अपने सख्त कर्तव्य का पालन करने से, या तो चापलूसी से या एक छिपी हुई धमकी या चेतावनी से या राज्य के खिलाफ अपने मन में पूर्वाग्रह पैदा करके।

24. ई. एम. शंकरन नम्बूदरीपद बनाम टी.

नारायणन नांबियार केरल उच्च न्यायालय द्वारा अदालत की अवमानना के लिए अपनी दोषसिद्धि और सजा के खिलाफ अपीलकर्ता, जो एक पूर्व मुख्यमंत्री थे, की अपील पर विचार कर रहे थे। उक्त अपीलार्थी ने संवाददाता सम्मेलन में कहा था कि न्यायाधीश वर्ग घृणा, वर्ग हितों और वर्ग पूर्वाग्रहों से निर्देशित और प्रभावित होते हैं और जहां साक्ष्य एक अच्छे कपड़े पहने हुए धनी व्यक्ति के बीच संतुलित होता है

और एक गरीब-बीमार-कपड़े पहने और अनपढ़ व्यक्ति, न्यायाधीश स्वाभाविक रूप से पहले वाले का पक्ष लेता है। उन्होंने आगे कहा था कि न्यायाधीशों का चुनाव एक बेहतर व्यवस्था होगी। प्रेस कॉन्फ्रेंस में उनके द्वारा कुछ अन्य बयान दिए गए थे। मुख्य न्यायाधीश हिदायतुल्ला ने इस प्रकार टिप्पणी की:

" 6. अवमानना का कानून अदालतों के कारावास से दंडित करने या शब्दों या कार्यों के दोषी व्यक्तियों को दंडित करने के अधिकार से उपजा है जो या तो न्याय के प्रशासन में बाधा डालते हैं या बाधा डालते हैं। इस अधिकार का प्रयोग भारत में सभी न्यायालयों द्वारा तब किया जाता है जब अवमानना प्रत्यक्ष रूप से की जाती है और उच्च न्यायालयों द्वारा अपनी ओर से या अपने अधीनस्थ न्यायालयों की ओर से किया जाता है, भले ही

अदालतों के बाहर किया गया। पूर्व में, इसे अभिलेख न्यायालय की शक्तियों में निहित माना जाता था और अब के संविधान द्वारा भारत, यह सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों की शक्तियों का एक हिस्सा है। अवमानना के कई प्रकार हैं। मुख्य रूप

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अवमानना का अर्थ न्यायाधीशों का अपमान करना, उन पर हमला करना, निष्पक्ष सुनवाई के प्रति पूर्वाग्रह की प्रवृत्ति के साथ लंबित कार्यवाही पर टिप्पणी करना है।

अदालतों के अधिकारियों, गवाहों या पक्षों के लिए बाधा, अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग, अदालत से जुड़े अधिकारियों द्वारा कर्तव्य का उल्लंघन और न्यायाधीशों या अदालतों को बदनाम करना। अंतिम रूप, आम तौर पर, तब होता है जब किसी व्यक्ति का आचरण कानून के अधिकार और प्रशासन को अनादर या उपेक्षा में लाता है। इस आचरण में वे सभी कार्य शामिल हैं जो

न्यायालय को बदनाम या अनादर में लाना या जो इसकी गरिमा को आहत करता है, इसकी महिमा का अपमान करता है या इसके अधिकार को चुनौती देता है। ऐसी अवमानना एकल न्यायाधीश या एकल न्यायालय के संबंध में की जा सकती है, लेकिन कुछ परिस्थितियों में, पूरी न्यायपालिका या न्यायिक प्रणाली के संबंध में की जा सकती है। सवाल यह है कि क्या इस मामले की परिस्थितियों में अपराध किया गया था।

25. सी. जे. हिदायतुल्ला ने कहा कि, जब किसी व्यक्ति का आचरण कानून के अधिकार और प्रशासन को अनादर में लाता है

या उपेक्षा करना, यह न्यायालय को बदनाम करने के बराबर होगा। इस आचरण में वे सभी कार्य शामिल हैं जो अदालत को बदनाम या अनादर में लाते हैं।

या जो इसकी गरिमा को आहत करता है, इसकी महिमा का अपमान करता है या इसके अधिकार को चुनौती देता है। दोषसिद्धि को कायम रखते हुए, इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

" 34. ..... दूसरी ओर, हम इस अवसर (एक प्रेस कॉन्फ्रेंस) को नजरअंदाज नहीं कर सकते हैं, एक प्रमुख के रूप में उनके शब्दों में लोगों का विश्वास।

मंत्री और तैयार कान जो उनकी पार्टी और बाहर के कई लोग उन्हें देते थे। उसके शब्दों से होने वाली शरारत का मूल्यांकन उसे दोषी ठहराने के लिए करने की आवश्यकता नहीं है। कानून न केवल उन कार्यों को दंडित करता है जो वास्तव में अदालतों और न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करते हैं, बल्कि उन लोगों को भी दंडित करता है जिनकी प्रवृत्ति है, अर्थात, एक विशेष परिणाम उत्पन्न करने की संभावना है। के दृष्टिकोण से आंका गया

अदालतों और न्याय प्रशासन, हमारे मन में संदेह की कोई झलक नहीं है कि अपीलकर्ता अवमानना का दोषी है

"अदालत।" ""

26. सी. के. डाफ्टरी और अन्य के मामले में। बनाम ओ. पी. गुप्ता और अन्य। यह न्यायालय बार एसोसिएशन के अध्यक्ष और कुछ अन्य अधिवक्ताओं द्वारा संविधान के अनुच्छेद 129 के तहत दिए गए प्रस्ताव पर विचार कर रहा था। उक्त प्रस्ताव द्वारा, उसमें याचिकाकर्ताओं ने प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा मुद्रित और प्रकाशित पर्चे को इस न्यायालय के ध्यान में लाया था, जिसमें न्यायाधीशों के खिलाफ अपमानजनक आक्षेप लगाए गए थे

8 (1971) 1 एस. सी. सी. 626 आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

इस न्यायालय से। इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगाः

" हम उनसे सहमत होने में असमर्थ हैं कि किसी निर्णय या पिछले आचरण के संबंध में न्यायाधीश पर अपमानजनक हमले का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। न्याय के उचित प्रशासन पर प्रभाव। हमारे जैसे देश में इस तरह के हमले का न्यायपालिका में जनता के विश्वास को कम करने का अपरिहार्य प्रभाव पड़ता है। यदि न्यायपालिका में विश्वास जाता है, तो न्याय के उचित प्रशासन को निश्चित रूप से नुकसान होता है।

27. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि संविधान पीठ द्वारा यह स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी निर्णय या पिछले आचरण के संबंध में किसी न्यायाधीश पर अपमानजनक हमले का उचित प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है

न्याय की। संविधान पीठ ने स्पष्ट रूप से कहा है कि हमारे जैसे देश में इस तरह के हमले का न्यायपालिका में जनता के विश्वास को कम करने का अपरिहार्य प्रभाव पड़ता है और यदि न्यायपालिका में विश्वास जाता है, तो न्याय के उचित प्रशासन को निश्चित रूप से नुकसान होता है। उक्त मामले में अवमाननाकर्ता ओ. पी. गुप्ता को अवमानना के लिए दोषी ठहराने के बाद, इस अदालत ने उनके द्वारा मांगी गई माफी को स्वीकार करने से इनकार कर दिया और पाया कि माफी और नए दुर्व्यवहार पर शायद ही ध्यान दिया जा सकता है। हालांकि, एक उदार दृष्टिकोण लेते हुए, इस अदालत ने उन्हें सरलता से पीड़ित होने की सजा सुनाई

दो महीने की कैद।

28. बरदकांत मिश्रा (उपरोक्त) के मामले में, प्रशासनिक पक्ष से उच्च न्यायालय के प्रतिकूल आदेशों से व्यथित एक असंतुष्ट न्यायिक अधिकारी ने एक कथित अपील में अपमानजनक आरोप लगाए।

राज्यपाल। अपीलार्थी के इस तर्क पर विचार करते हुए कि न्यायाधीशों के खिलाफ लगाए गए आरोप प्रशासनिक क्षमता में न्यायाधीश के कार्यों से संबंधित हैं और न्यायिक क्षमता में कार्य नहीं करते हैं, संविधान पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

" 43. हमें "न्याय प्रशासन" अभिव्यक्ति की किसी भी व्यापक परिभाषा के लिए संदर्भित नहीं किया गया है। लेकिन ऐतिहासिक रूप से, और लोगों के दिमाग में, न्याय का प्रशासन विशेष रूप से संवैधानिक रूप से स्थापित न्यायालयों से जुड़ा हुआ है। इस तरह के न्यायालयों की स्थापना कई कानूनों द्वारा पूरे देश में की गई है। न्यायालय के पीठासीन न्यायाधीश अपने आप में न्यायालय को मूर्त रूप देते हैं, और जब न्याय के प्रशासन के कार्य में लगे होते हैं तो क्लर्क और मंत्रिस्तरीय अधिकारियों के एक पूरक द्वारा सहायता की जाती है, जिनका कर्तव्य अभिलेखों की रक्षा करना और उनका रखरखाव करना, रिट तैयार करना, प्रक्रियाओं को पूरा करना आदि है। जिन कार्यों में वे लगे हुए हैं, वे पीठासीन न्यायाधीश द्वारा न्याय के प्रशासन की सहायता में किए गए कार्य हैं।

क्लर्कों और मंत्रिस्तरीय अधिकारियों की नियुक्ति की शक्ति शामिल है

पीठासीन न्यायाधीश द्वारा उन पर प्रशासनिक नियंत्रण और हालांकि इस तरह के नियंत्रण को न्याय के स्थान पर बैठे न्यायाधीश के कर्तव्यों से अलग करने के लिए प्रशासनिक के रूप में वर्णित किया गया है, इस तरह के नियंत्रण का प्रयोग न्यायाधीश द्वारा न्यायिक प्रक्रिया के दौरान न्यायाधीश के रूप में किया जाता है। प्रशासन। न्यायिक प्रशासन न्यायाधीश का एक एकीकृत कार्य है और जहां तक न्यायिक प्रशासन में ईमानदारी के उच्च मानकों को बनाए रखना है, वह किसी भी प्रकार के विच्छेदन को सहन नहीं कर सकता है।

चिंतित हैं। एक अदालत का पूरा सेट अप इस उद्देश्य के लिए है कि

न्याय के प्रशासन और न्यायाधीश द्वारा अपने सहायकों पर प्रयोग किए जाने वाले नियंत्रण का उद्देश्य भी न्याय की शुद्धता बनाए रखना है।

न्याय का प्रशासन। ये टिप्पणियां देश में न्याय के सभी न्यायालयों पर लागू होती हैं, चाहे उन्हें न्याय के उच्च या निम्न न्यायालयों के रूप में माना जाता है।

44. न्याय के न्यायालयों को अपने संविधान के अनुसार न्याय के उचित प्रशासन के लिए कई प्रकार के कार्य करने होते हैं। इन कार्यों को करने में ईमानदारी के सख्त मानकों से कोई भी चूक न्याय के प्रशासन को प्रभावित करने के लिए बाध्य है जो न्याय के स्थान से कारणों के केवल निर्णय की तुलना में व्यापक महत्व का शब्द है।

45. जिस देश में न्यायालयों का पदानुक्रम एक दूसरे के ऊपर है, वहां यह पाया जाना सामान्य है कि जो ऊपर है उसे उसके नीचे वाले पर अनुशासनात्मक नियंत्रण सौंपा गया है। इस तरह के नियंत्रण को यह सुनिश्चित करने के लिए तैयार किया गया है कि निचला न्यायालय अपने न्यायिक प्रशासन में ठीक से काम करे। एक न्यायाधीश एक न्यायाधीश के कार्यों के प्रयोग में लगे रहते हुए दुराचार द्वारा न्यायिक प्रशासन को दूषित कर सकता है। इसलिए, सर्वोच्च न्यायालय के लिए यह उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि उसके आचरण और व्यवहार के बारे में सतर्क रहना।

न्यायाधीश के रूप में अधीनस्थ न्यायाधीश, जैसा कि कानून का प्रशासन करना है, क्योंकि दोनों कार्य न्याय के प्रशासन के लिए आवश्यक हैं। उच्च न्यायालय का न्यायाधीश जिसमें यह अनुशासनात्मक नियंत्रण निहित है, ऐसे मामलों में न्यायाधीश के रूप में उतना ही कार्य करता है जितना कि जब वह अपने समक्ष मामलों की सुनवाई और निपटान करता है। प्रक्रियाएँ अलग-अलग हो सकती हैं। वह जिस स्थान पर बैठता है वह अलग हो सकता है। लेकिन न्यायिक प्रशासन के नियत समय में दोनों मामलों में शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। यदि वरिष्ठ न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों को अनुशासित करने में लापरवाही करते हैं, तो वे न्यायिक के एक आवश्यक कार्य में विफल हो जाएंगे।

प्रशासन और न्याय के पूरे प्रशासन को आई. एन. आर. ई. में लानाः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

न्याय प्रशासन कानून निर्धारित करने या पक्षों के बीच न्याय करने के रूप में। 46. जिसे आमतौर पर एक प्रशासनिक कार्य के रूप में वर्णित किया जाता है, जब उच्च न्यायालय में निहित किया जाता है, तो लगातार माना जाता है।

न्याय के प्रशासन में एक कार्य के रूप में कानूनों द्वारा। उदाहरण के लिए कलकत्ता, बॉम्बे और मद्रास उच्च न्यायालय के लिए लेटर्स पेटेंट को लें। इसका खंड 8 मुख्य न्यायाधीश को समय-समय पर इतने सारे और ऐसे क्लर्कों और अन्य मंत्रिस्तरीय अधिकारियों को नियुक्त करने के लिए अधिकृत और सशक्त बनाता है।

न्याय के प्रशासन और इन पेटेंट पत्रों द्वारा उक्त उच्च न्यायालय को दी गई और प्रतिबद्ध सभी शक्तियों और प्राधिकरणों के उचित निष्पादन के लिए आवश्यक पाया जाएगा। यह स्पष्ट है कि न्याय के प्रशासन के लिए लिपिकों और मंत्रिस्तरीय अधिकारियों को नियुक्त करने के मुख्य न्यायाधीश के इस अधिकार का तात्पर्य है -

न्याय प्रशासन के हित में उन्हें नियंत्रित करने का अधिकार। यह नियंत्रण कार्य जिसे आमतौर पर एक के रूप में वर्णित किया जाता है

प्रशासनिक कार्य न्याय के प्रशासन को सुरक्षित करने के प्राथमिक उद्देश्य के साथ तैयार किया गया है। इसलिए, जब मुख्य न्यायाधीश मंत्रिस्तरीय अधिकारियों की नियुक्ति करते हैं और अनुशासनात्मक कार्य करते हैं उन पर नियंत्रण, यह एक ऐसा कार्य है जिसे यद्यपि प्रशासनिक के रूप में वर्णित किया गया है, वास्तव में न्याय के प्रशासन के क्रम में है। इसी तरह उच्च न्यायालय अधिनियम, 1861 की धारा 9 उच्च न्यायालयों को कई प्रकार की अधिकारिता और शक्तियां प्रदान करती है।

कि ऐसी सभी अधिकारिताएँ और शक्तियाँ "उस प्रेसीडेंसी में न्याय के प्रशासन के लिए और उसके संबंध में हैं जिसके लिए यह स्थापित किया गया है।" इसी तरह भारत सरकार अधिनियम, 1915 की धारा 106 से पता चलता है कि उच्च न्यायालय के कई अधिकार क्षेत्र और उनकी सभी शक्तियां और अधिकार "क्लर्क नियुक्त करने की शक्ति सहित न्याय के प्रशासन के संबंध में हैं। और न्यायालय के अन्य मंत्री अधिकारी "। भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 223 निम्नलिखित क्षेत्राधिकारों को संरक्षित करती है -

न्यायालय में न्याय के प्रशासन के संबंध में विद्यमान उच्च न्यायालयों और उनके न्यायाधीशों की संबंधित शक्तियां। उस अधिनियम की धारा 224 में घोषणा की गई है कि उच्च न्यायालय के पास [2020] 8 एस. सी. आर. होगा।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कुछ समय के लिए भारत के सभी न्यायालयों पर अधीक्षण अपने अपीलीय अधिकार क्षेत्र और इस अधीक्षण के अधीन है, अब यह तय हो गया है,

के प्रशासनिक और न्यायिक कार्यों दोनों के लिए विस्तारित

अधीनस्थ न्यायालय। जब हम अपने संविधान पर आते हैं तो हम पाते हैं कि जहां अनुच्छेद 225 और 227 न्याय के प्रशासन के संबंध में इन शक्तियों को संरक्षित करते हैं और कुछ हद तक विस्तारित करते हैं, वहीं अनुच्छेद 235 उच्च न्यायालय में जिला न्यायालयों पर नियंत्रण निहित करता है और

उसके अधीनस्थ न्यायालय। पश्चिमी राज्य में

बंगाल बनाम. नृपेंद्र नाथ बागची [ए. आई. आर 1966 एस. सी. 447: (1966) 1 एससीआर 771: (1968) 1 लैब एलजे 270] इस न्यायालय ने बताया है कि अनुच्छेद 235 के तहत नियंत्रण न्यायाधीशों के आचरण और अनुशासन पर नियंत्रण है। यह एक ऐसा कार्य है जो, जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं, निस्संदेह न्याय के प्रशासन से जुड़ा हुआ है। द.

अधीनस्थ न्यायपालिका के न्यायिक प्रशासन में दुराचारों पर अनुशासनात्मक नियंत्रण एक ऐसा कार्य है जो

उच्च न्यायालय को न्याय प्रशासन के हित में कार्य करना चाहिए। यह एक ऐसा कार्य है जो न्याय के प्रशासन के लिए व्यापक अर्थ में आवश्यक है और इसलिए, जब उच्च न्यायालय अनुशासनात्मक क्षमता में कार्य करता है, तो यह केवल

न्याय प्रशासन को आगे बढ़ाना।

47. इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि किसी राज्य में उच्चतम से लेकर निम्नतम तक न्याय की अदालतें अपने संविधान द्वारा न्याय के प्रशासन से सीधे जुड़े कार्यों के लिए सौंपी जाती हैं, और यह उन सभी लोगों की अपेक्षा और विश्वास है जो इसमें कार्य करते हैं या होने की संभावना रखते हैं कि अदालतें अपने सभी कार्यों को बिना किसी डर या पक्षपात, स्नेह या दुर्भावना के उच्च स्तर पर करती हैं।

29. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि संविधान पीठ का मानना है कि न्यायाधीश न्याय के स्थान से कारणों के निर्णय के अलावा हैं -

अनुशासनात्मक नियंत्रण सहित विभिन्न कार्यों का निर्वहन करना भी आवश्यक है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि उच्चतर न्यायालय का न्यायाधीश, जिसमें अनुशासनात्मक नियंत्रण निहित है, ऐसे मामलों में न्यायाधीश के रूप में उतना ही कार्य करता है जितना कि जब वह अपने समक्ष मामलों की सुनवाई और निपटान करता है, हालांकि प्रक्रियाएं अलग हो सकती हैं या वह स्थान जहां वह बैठता है, अलग हो सकता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दोनों मामलों में न्यायिक प्रशासन के नियत समय में शक्तियों का प्रयोग किया जाता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयों को अनुशासित करने की उपेक्षा करते हैं, तो वे न्यायिक प्रशासन के एक आवश्यक कार्य में विफल हो जाएंगे और आई. एन. आर. ई. के पूरे प्रशासन को लाएंगेः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अवमानना और बदनामी में न्याय। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल पक्षों के बीच निर्णय का कार्य किसी भी न्यायालय के लिए न्याय का संपूर्ण प्रशासन नहीं है।

30. रेक्स बनाम के मामले में विल्मोट सी. जे. की राय का हवाला देते हुए। अल्मोन ', संविधान पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी की:

" "न्यायालय के अधिकार" शब्दों से उनका क्या तात्पर्य है, यह समझाते हुए उन्होंने कहा कि "प्राधिकरण" शब्द का उपयोग अक्सर कानून घोषित करने के अधिकार को व्यक्त करने के लिए किया जाता है, जिसे उचित रूप से अधिकार क्षेत्र कहा जाता है, और इसके प्रति आज्ञाकारिता को लागू करने के लिए, जिस अर्थ में यह शब्द शक्ति के बराबर है: लेकिन 'प्राधिकरण' शब्द से मेरा मतलब न्यायाधीशों की उस बलपूर्वक शक्ति से नहीं है, बल्कि उनके न्याय और सत्यनिष्ठा की राय से उन्हें और उनके कार्यों को दिया जाने वाला सम्मान और सम्मान है।

31. इसलिए संविधान पीठ इस राय को मंजूरी देती है कि -

विल्मोट सी. जे. ने कहा कि 'प्राधिकरण' शब्द का अर्थ न्यायाधीशों की बलपूर्वक शक्ति के रूप में नहीं है, बल्कि उनके न्याय और सत्यनिष्ठा की राय से उन्हें और उनके कार्यों को दिया जाने वाला सम्मान और सम्मान है। 32. बरदकांत मिश्रा (उपर्युक्त) के मामले में संविधान पीठ की निम्नलिखित टिप्पणियों को संदर्भित करना भी प्रासंगिक हो सकता है:

" 49. न्यायालय का स्कैंडलाइजेशन अवमानना की एक प्रजाति है और

कई रूप ले सकते हैं। न्यायाधीश का अपमान एक सामान्य रूप है। जब इस तरह के अपमान के लिए अवमानना की कार्यवाही की जाती है तो अदालत को जो सवाल पूछना होता है वह यह है कि क्या अपमान एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश का है। (क्वीन वी. देखें। ग्रे), [(1900) 2 क्यू. बी. 36,40] या यह एक व्यक्ति के रूप में न्यायाधीश का अपमान है। यदि न्यायाधीश को उसके निजी उपायों पर छोड़ दिया जाता है और न्यायालय के पास अवमानना करने की कोई शक्ति नहीं है। यदि पूर्व, न्यायालय करेगा ईमानदारी से और स्पष्ट
और उचित संदेह से परे मामलों में अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए आगे बढ़ें। दूसरा, न्यायालय को न्याय के प्रशासन को प्रभावित करने वाले नुकसान की मात्रा पर भी विचार करना होगा और यदि यह मामूली और नोटिस के तहत है, तो न्यायालय अवमानना के लिए दंडित नहीं करेंगे। यह हितकारी प्रथा अदालत की अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 13 द्वारा अपनाई गई है। न्यायक्षेत्र का उद्देश्य न्यायाधीशों की व्यक्तिगत गरिमा को बनाए रखना नहीं है। यह निश्चित आधारों पर टिका होना चाहिए। न्यायाधीशों का भरोसा

उनका आचरण स्वयं ही अपनी पुष्टि है।

9 1765 विल्मोट के टिप्पणियाँ, 243:

50. लेकिन अगर न्यायाधीश के रूप में काम करने वाले न्यायाधीश पर हमला

न्याय के प्रशासन को काफी हद तक प्रभावित करता है यह अवमानना के लिए दंडनीय एक सार्वजनिक शरारत बन जाती है, और इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि क्या ऐसा हमला इस बात पर आधारित है कि एक न्यायाधीश ने अपनी प्रशासनिक जिम्मेदारियों के प्रयोग में क्या किया है। एक न्यायाधीश के कार्य विभाज्य हो सकते हैं, लेकिन उसकी सत्यनिष्ठा और अधिकार न्याय के प्रशासन के संदर्भ में विभाज्य नहीं हैं। भ्रष्ट प्रशासन के लिए उन पर एक अनुचित हमला सार्वजनिक नुकसान करने में उतना ही शक्तिशाली है

उनके न्यायिक कार्य पर हमले के रूप में "।

33. जैसा कि श्री दवे ने ठीक ही कहा है, संविधान पीठ का मानना है कि जब किसी न्यायाधीश को बदनाम करने के लिए अवमानना की कार्यवाही की जाती है, तो अदालत खुद से यह सवाल पूछेगी कि क्या न्यायाधीश को न्यायाधीश के रूप में बदनाम किया जाता है या न्यायाधीश को न्यायाधीश के रूप में बदनाम किया जाता है।

व्यक्तिगत। बाद के मामले में, न्यायाधीश को अपने निजी उपायों पर छोड़ दिया जाता है और न्यायालय के पास अवमानना करने की कोई शक्ति नहीं होगी। हालांकि, पूर्व मामले में, न्यायालय ईमानदारी से और स्पष्ट और उचित संदेह से परे मामलों में अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने के लिए आगे बढ़ेगा। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अधिकारिता का उद्देश्य न्यायाधीशों की व्यक्तिगत गरिमा को बनाए रखना नहीं है। हालांकि, अगर न्यायाधीश पर हमला होता है एक न्यायाधीश के रूप में कार्य करना न्याय के प्रशासन को काफी हद तक प्रभावित करता है, यह अवमानना के लिए दंडनीय एक सार्वजनिक शरारत बन जाती है और इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि इस तरह का हमला इस बात पर आधारित है कि एक न्यायाधीश ने अपनी प्रशासनिक जिम्मेदारियों के प्रयोग में क्या किया है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक न्यायाधीश के कार्य विभाज्य हो सकते हैं, लेकिन उसकी सत्यनिष्ठा और अधिकार न्याय के प्रशासन के संदर्भ में विभाज्य नहीं हैं। यह माना गया है कि भ्रष्ट प्रशासन के लिए उन पर एक अनुचित हमला सार्वजनिक नुकसान करने में उतना ही शक्तिशाली है जितना कि उनके न्यायिक कार्य पर हमला।

34. संविधान पीठ इस निष्कर्ष पर पहुंची कि विशुद्ध रूप से प्रशासनिक या गैर-न्यायिक मामलों में भी न्यायाधीश के रूप में काम करने वाले न्यायाधीश की निंदात्मक आलोचना 'आपराधिक' के बराबर है। अवमानना '।

35. उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित दोषसिद्धि को बरकरार रखते हुए, विशिष्ट तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, संविधान पीठ ने संशोधन किया

उसे 1,000/- रुपये का जुर्माना देने या चूक में तीन महीने के लिए साधारण कारावास भुगतने का निर्देश देकर सजा।

36. श्री दवे ने सहमत राय पर दृढ़ता से भरोसा किया है

कृष्ण अय्यर, जे. बारदाकांत मिश्रा (ऊपर) में निम्नलिखित पैराग्राफ आईएन आरई में:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

" 88. फिर भी, अगर न्यायाधीशों में कमजोरियां हैं-आखिरकार वे इंसान हैं तो उन्हें स्वतंत्र आलोचना द्वारा ठीक करने की आवश्यकता है। अगर

न्यायपालिका में गंभीर कमियाँ हैं जो प्रणालीगत माँग करती हैं।

रचनात्मक आलोचना के माध्यम से शुरू किए गए सामाजिक-उन्मुख सुधार के माध्यम से सुधार, अवमानना की शक्ति एक बाधा नहीं होनी चाहिए। यह सब, अदालतों में जनता के विश्वास को कम करने के बजाय, इसे बढ़ाता है और अंतिम विश्लेषण में, अवमानना शक्ति का अंधाधुंध सहारा लेकर इसे दबाया नहीं जा सकता है। इस तरह के शरीर भी

विधि आयोग या विधि संस्थान और शोधकर्ता, कानूनी और समाजशास्त्रीय, "अवमानना" जोखिम उठा सकते हैं क्योंकि उनके पेशेवर काम में कभी-कभी न्यायाधीशों, न्यायिक प्रक्रियाओं और स्वयं प्रणाली की अप्रिय आलोचना शामिल होती है और इस प्रकार वे चारों ओर खतरनाक रूप से घूमते हैं।

कानून की परिधि यदि व्यापक रूप से समझी जाती है। न्यायिक सुधार के लिए रचनात्मक कानूनी पत्रकारिता और सक्रिय राजनीतिक कौशल को अवमानना कार्रवाई की अनिर्धारित आशंका से खतरे में नहीं डाला जा सकता है।

37. उपरोक्त पैराग्राफ के आधार पर, यह उनका निवेदन है कि न्यायाधीशों में भी कमजोरियां होती हैं। उनके अनुसार, क्या कथित अवमाननाकर्ता

यह इस न्यायालय के ध्यान में गंभीर कमियों को लाने के लिए किया गया है, जो प्रणालीगत सुधार की मांग करते हैं। उनके अनुसार, उन्होंने जो किया है वह अदालत में जनता के विश्वास को कम करने से बहुत दूर है, लेकिन इसे बढ़ाता है और इसलिए, अवमानना शक्ति का अंधाधुंध सहारा लेकर इसे दबाया नहीं जा सकता है। हम अपने निर्णय के बाद के भाग में इस प्रस्तुतिकरण पर विचार करेंगे।

38. श्री दवे ने इस न्यायालय के फैसले पर दृढ़ता से भरोसा किया हैः एस. मुलगांवकर (ऊपर)। निम्नलिखित का उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। बेग, सी. जे. के निर्णय में टिप्पणियाँ।

" 16. न्यायपालिका आलोचना से अछूती नहीं रह सकती। लेकिन, जब वह आलोचना स्पष्ट विकृति या घोर गलत बयान पर आधारित होती है

और इस तरह से बनाया गया जो न्यायपालिका के प्रति सम्मान को कम करने और उसमें जनता के विश्वास को नष्ट करने के लिए बनाया गया है, इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। मैं उन लोगों में से नहीं हूँ जो सोचते हैं कि अवमानना के लिए एक कार्रवाई

न्यायालय, जो विवेकाधीन है, को बार-बार या हल्के में लिया जाना चाहिए। लेकिन, साथ ही, मुझे नहीं लगता कि हमें इस हथियार का उपयोग करने से बचना चाहिए, भले ही इसका उपयोग घोर और बार-बार गलती करने वाले हिस्से में व्यवहार के मानकों को सही करने के लिए आवश्यक हो। यह हो सकता है

न्यायपालिका के लिए कई मामलों में उदारतापूर्वक धर्मार्थ रवैया अपनाना बेहतर होता है, भले ही उसके कार्यों की पूरी तरह से अनुचित और अनुचित आलोचना सुधार के लिए वास्तविक चिंता से की जाती हो। लेकिन, जब कोई योजना और डिजाइन [2020] दिखाई देता है तो एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

इस मामले में आगे बढ़ते हुए, मुझे नहीं लगता कि यह उचित होगा इंडियन एक्सप्रेस में लिखी या कही गई किसी भी बात को वास्तव में दुर्भावनापूर्ण या दुर्भावनापूर्ण के रूप में चिह्नित करना और मैं ऐसा नहीं करता। हमने उस पर कोई निर्णय दर्ज नहीं किया है, हालाँकि वहाँ जो लिखा गया था, उस पर संभावित निर्माण ऊपर इंगित किए गए हैं।

घोर और बार-बार गलती करने वाली तिमाही में व्यवहार के मानकों को सही करने की आवश्यकता होती है। विद्वान सी. जे. ने आगे कहा कि न्यायपालिका के लिए कई मामलों में उदारतापूर्वक धर्मार्थ रवैया अपनाना बेहतर हो सकता है, भले ही इसकी पूरी तरह से अनुचित और अनुचित आलोचना हो। संचालन सुधार के लिए प्रामाणिक चिंता से किया जाता है। हालाँकि, जब ऐसी कोई योजना और योजना दिखाई देती है जो परिणाम लाने के लिए हमारी न्यायिक प्रणाली में विश्वास को नुकसान पहुँचाती है और दुर्भावनापूर्ण हमले करके सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का मनोबल गिराती है, तो निडर, निष्पक्ष और अटूट न्याय के उच्च मानकों को बनाए रखने में रुचि रखने वाला कोई भी व्यक्ति परेशान महसूस करेगा। उनका मानना है कि जब सवाल किसी संस्था को नुकसान पहुँचाने का हो, जैसे कि देश का सर्वोच्च न्यायालय, तो कोई आरई में नहीं आ सकता हैः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

के समुदाय में राष्ट्रीय सम्मान और प्रतिष्ठा पर इसके प्रभावों को नजरअंदाज करें

राष्ट्रों। उन्होंने कहा कि यदि निर्भीक और निष्पक्ष न्याय की अदालतें एक स्वस्थ लोकतंत्र की आधारशिला हैं, तो उन पर दुर्भावनापूर्ण हमलों से उनमें विश्वास को कम करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

40. यद्यपि न्यायालय, उपरोक्त टिप्पणियां महत्वपूर्ण हैं,

सम्माननीय। 41. कृष्ण अय्यर, जे. इन रे की निम्नलिखित टिप्पणियों का उल्लेख करना प्रासंगिक होगाः एस. मुलगांवकर (ऊपर):

पोंटिफिकल होना अव्यावहारिक है; लचीला होना यथार्थवादी होना है। फिर, ये व्यापक दिशानिर्देश क्या हैं-एक पूर्ण सूची नहीं, बल्कि पहले से मान्य न्यायिक मानदंड? 27. अवमानना शक्ति की इस शाखा में पहला नियम एक बुद्धिमानी है।

अपनी अधिकारिता की इस शाखा के न्यायालय द्वारा उपयोग की अर्थव्यवस्था। न्यायालय गंभीरता और गंभीरता के साथ कार्य करेगा जहां न्याय है।

न्यायाधीशों पर घोर और/या निराधार हमले से खतरे में पड़ जाते हैं, जहां हमले की गणना न्यायिक प्रक्रिया में बाधा डालने या नष्ट करने के लिए की जाती है। अदालत एक राजसी उदारवाद की उपेक्षा करने के लिए तैयार है, तुच्छ और अश्लील अपराधों से कुत्ते भौंक सकते हैं, कारवां गुजर जाएगा। न्यायालय को एक आसान चिड़चिड़ापन के परिणामस्वरूप कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं किया जाएगा। इसके बजाय, यह विशेषताओं के परिप्रेक्ष्य पर एक ध्वनिक नज़र डालेगा और एक नक्षत्र द्वारा निर्देशित किया जाएगा

संवैधानिक और अन्य विचार जब यह उपयोग करने का विकल्प चुनता है, या

इसकी अवमानना की शक्ति का उपयोग करने से बचें।

28. दूसरा सिद्धांत स्वतंत्र आलोचना के संवैधानिक मूल्यों को सुसंगत बनाना होना चाहिए, जिसमें चौथा खंड शामिल है, और एक निडर क्यूरियल प्रक्रिया और इसके पीठासीन पदाधिकारी, न्यायाधीश की आवश्यकता है। एक सुखद संतुलन बनाना होगा, न्यायाधीश के खिलाफ संदेह का लाभ उदारता से दिया जा रहा है, जो सीमांत से अधिक है। विचलन लेकिन भद्दे, द्वेषपूर्ण, पश्चातापहीन और दुर्भावनापूर्ण अवमानकों पर कानून की सर्वोच्चता को गंभीर रूप से साबित करते हैं, चाहे वे शक्तिशाली प्रेस हों, निहित स्वार्थों के गिरोह हों, ओलंपियन प्रतिष्ठानों के अनुभवी स्तंभकार हों। इसलिए नहीं कि

न्यायाधीश, एक उच्च मूल्य का मानव प्रतीक, व्यक्तिगत रूप से एक शाही विशेषाधिकार से लैस है, लेकिन क्योंकि "आप हो-अवमानक [2020] 8 एस. सी. आर.

हमेशा इतना ऊँचा, कानून-लोगों की न्याय की अभिव्यक्ति-आपके ऊपर है। जिज्ञासु साहस अहंकारी पर हावी हो जाता है, भले ही न्यायिक उदारता गलत या अतिरंजित आलोचकों को माफ कर देती है। वास्तव में, न्यायाधीश की निष्पक्ष रूप से आलोचना करना, भले ही कठोर हो, कोई अपराध नहीं है, बल्कि एक आवश्यक अधिकार है, जो लोकतंत्र में दो बार आशीर्वादित है क्योंकि यह उसे आशीर्वाद देता है।

जो देता है और जो लेता है। जहां अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, निष्पक्ष रूप से प्रयोग की जाती है, उचित पैमाने पर सार्वजनिक हित को कम करती है, सार्वजनिक न्याय इसे रोक नहीं सकता है या इसे नियंत्रित नहीं कर सकता है, संवैधानिक रूप से स्वतंत्र लोग निडर न्याय के अंतिम गारंटर हैं। यही हमारे संविधान की आधारशिला है; यही हमारी अवमानना शक्ति की कसौटी है, जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और निष्पक्ष न्याय के संगम पर केंद्रित है, जो हमारे मौलिक कानून का धर्मशास्त्रीय सार है। अदालत की अवमानना पर लागू होने वाले एकीकृत तरीके से सामाजिक दर्शन और कानून के दर्शन की बात करें तो इसमें कोई वैचारिक ध्रुवीयता नहीं है, बल्कि एक नाजुक संतुलन और न्यायिक व्यवस्था है।

" ज्ञान रेखा खींचता है। जैसा कि होता है, हमारे संविधान निर्माताओं ने इन सभी प्रतिस्पर्धी हितों को संतुलित करने की आवश्यकता को पहले ही समझ लिया था।

न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971 की धारा 2 (1) (सी) में निम्नलिखित प्रावधान हैं:

" " आपराधिक अवमानना का अर्थ है किसी मामले का प्रकाशन (चाहे शब्दों द्वारा, बोले गए या लिखित, या संकेतों द्वारा, या दृश्य अभ्यावेदन द्वारा, या अन्यथा) या कोई अन्य कार्य करना जो कुछ भी हो।

((i) अपमान करता है या अपमान करने की प्रवृत्ति रखता है, या कम करता है या प्रवृत्त करता है।

किसी भी अदालत के अधिकार को कम करना "

यह एक अत्यंत व्यापक परिभाषा है, लेकिन इसे उन संवैधानिक प्रावधानों के परिप्रेक्ष्य से अलग नहीं पढ़ा जा सकता है जिनके भीतर संविधान के संस्थापक सभी अतीत और भविष्य के कानूनों को अर्थ देने का इरादा रखते थे। अनुच्छेद 19 (2) के प्रावधानों के अनुसार, अदालत की अवमानना से संबंधित सभी कानूनों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के प्रयोग पर "उचित प्रतिबंध" होना था। अदालतों को शक्ति दी गई थी- और वास्तव में, परस्पर विरोधी उद्देश्यों, हितों और मूल्यों में सामंजस्य स्थापित करने की जिम्मेदारी दी गई थी। यह यूनाइटेड किंगडम [(1974) में अदालत की अवमानना पर फिलिमोर समिति की रिपोर्ट के बिल्कुल विपरीत है। एस. 794. पैरा 143-5, पीपी। 61-2] जिसने अवमानना मामलों में जनहित के बचाव की सिफारिश नहीं की थी।

29. तीसरा सिद्धांत एक बदनाम न्यायाधीश की व्यक्तिगत सुरक्षा और आई. एन. आर. ई. की बाधा की रोकथाम के बीच भ्रम से बचना है:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

लोक न्याय और उस महान प्रक्रिया में समुदाय का विश्वास। पहला अवमानना नहीं है, दूसरा है, हालांकि अतिव्यापी स्थान प्रचुर मात्रा में हैं। 30. चूंकि अवमानना का कानून न्याय के प्रशासन में जनता के विश्वास की रक्षा के लिए मौजूद है, इसलिए अपराध व्यक्तिगत न्यायाधीशों की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा पर हमले से नहीं किया जाएगा। जैसा कि प्रोफेसर गुडहार्ट ने कहा है [समाचार पत्रों को देखें]

न्यायालय की अवमानना, (1935) 48 हार्व एल. आर. 885,898]:

" अदालत को बदनाम करने का अर्थ है न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश की कोई भी शत्रुतापूर्ण आलोचना; उस पर कोई भी व्यक्तिगत हमला, जो उसके पद से असंबद्ध है, सामान्य नियमों के तहत किया जाता है। निन्दा और अपमान का "

इसी तरह, ग्रिफ़िथ, सी. जे. ने ऑस्ट्रेलियाई में कहा है

निकोल्स का मामला [(1911) 12 सी. एल. आर. 280,285] किः

" एक अर्थ में, इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक न्यायाधीश से संबंधित प्रत्येक मानहानिकारक प्रकाशन उसे अवमानना में लाता है।

उस शब्द का उपयोग मानहानि के कानून में किया जाता है, लेकिन यह इस बात का पालन नहीं करता है कि एक न्यायाधीश के बारे में कही गई हर बात उसे अवमानना में लाने के लिए सोची गई थी

इस मायने में यह अदालत की अवमानना के बराबर है।

इस प्रकार से एक विशेष संदर्भ के मामले में

बहामा द्वीप समूह [1893 ए. सी. 138] प्रिवी काउंसिल ने सलाह दी कि निवासी मुख्य न्यायाधीश के बारे में नासाउ गार्जियन में एक प्रकाशन के माध्यम से अवमानना नहीं की गई थी, जिन्होंने पहले खुद स्थानीय स्वच्छता स्थितियों की आलोचना की थी। यद्यपि अत्यधिक व्यंग्यात्मक शब्दों में लिखा गया था, प्रकाशन में व्यक्तिगत क्षमता के विपरीत मुख्य न्यायाधीश का उनके आधिकारिक रूप में उल्लेख नहीं किया गया था। इस प्रकार भले ही यह एक मानहानि थी, लेकिन यह अवमानना नहीं थी।

31. चौथा कार्यात्मक सिद्धांत जो अवमानना शक्ति के विवेकाधीन प्रयोग को निर्देशित करता है, वह है चौथी संपत्ति जो राज्य और लोगों के बीच एक अनिवार्य मध्यस्थ है।

और लोकतंत्र की ताकतों को मजबूत करने के लिए आवश्यक साधनों को जिम्मेदार सीमाओं के भीतर स्वतंत्र रूप से खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए, भले ही इसके महत्वपूर्ण ध्यान का केंद्र उच्चतम न्यायालय सहित न्यायालय हो।

32. न्यायाधीशों के लिए इस अधिकार क्षेत्र में पालन करने के लिए पांचवां मानक दिशानिर्देश अतिसंवेदनशील नहीं होना चाहिए, भले ही विकृतियाँ हों और [2020] 8 एस. सी. आर.

आलोचनाएँ सीमाओं को पार करती हैं, लेकिन गरिमापूर्ण व्यवहार, घटती उदासीनता और तिरस्कार द्वारा अश्लील निंदा को कम करने के लिए

न्यायिक ईमानदारी से।

33. छठा विचार यह है कि, समग्रता का मूल्यांकन करने के बाद

कारक, यदि न्यायालय न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर हमले को अपमानजनक, आक्रामक, डराने-धमकाने वाला या दुर्भावनापूर्ण मानता है

सीमाएँ, कानून के मजबूत हाथ को, जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर, उस पर प्रहार करना चाहिए जो चुनौती देता है
इसके स्रोत और धारा को दूषित करके कानून के शासन की सर्वोच्चता।

42. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने अपनी अनूठी शैली में कहा है कि अवमानना शक्ति का उपयोग करने की एक बुद्धिमान अर्थव्यवस्था

न्यायालय द्वारा पहला नियम है। न्यायालय को गंभीरता और गंभीरता के साथ कार्य करना चाहिए, जहां न्यायाधीशों पर घोर और/या निराधार हमले से न्याय खतरे में पड़ जाता है, जहां हमले की गणना न्यायिक प्रक्रिया में बाधा डालने या नष्ट करने के लिए की जाती है। अन्यथा, न्यायालय को एक राजसी उदारवाद, तुच्छ और तुच्छ अपराधों को नजरअंदाज करना चाहिए। वह कहता है कि कुत्ते भौंक सकते हैं, कारवां गुजर जाएगा। उन्होंने आगे कहा कि संवैधानिक मूल्यों

स्वतंत्र आलोचना, जिसमें चौथा अंश और एक निडर क्यूरियल प्रक्रिया और इसके पीठासीन पदाधिकारी की आवश्यकता शामिल है, न्यायाधीश को सामंजस्यपूर्ण होना चाहिए और दोनों के बीच एक सुखद संतुलन बनाना चाहिए। उन्होंने कहा कि एक बदनाम न्यायाधीश की व्यक्तिगत सुरक्षा और सार्वजनिक न्याय में बाधा की रोकथाम और उस महान प्रक्रिया में समुदाय के विश्वास के बीच भ्रम से बचा जाना चाहिए। इसे स्पष्ट रूप से ध्यान में रखा जाना चाहिए क्योंकि

पहला अवमानना नहीं है, दूसरा अवमानना है। उन्होंने आगे कहा कि चौथा स्तंभ जो राज्य और लोगों के बीच एक अनिवार्य मध्यस्थ है और लोकतंत्र की ताकतों को मजबूत करने के लिए आवश्यक साधन है, को जिम्मेदार सीमाओं के भीतर स्वतंत्र रूप से खेलने की अनुमति दी जानी चाहिए, भले ही इसके महत्वपूर्ण ध्यान का केंद्र न्यायालय हो, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय भी शामिल हो।

अदालत। उन्होंने कहा कि न्यायाधीशों को अतिसंवेदनशील नहीं होना चाहिए, भले ही विकृतियां और आलोचनाएं सीमाओं को पार कर जाएं, लेकिन उन्हें गरिमापूर्ण व्यवहार, उदासीनता और न्यायिक ईमानदारी द्वारा तिरस्कार द्वारा अश्लील निंदा को कम करना चाहिए। 43. उन्होंने कहा कि यदि अदालत कारकों की समग्रता का मूल्यांकन करने के बाद, न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर हमले को निंदनीय, आक्रामक, डराने-धमकाने वाला या दुर्भावनापूर्ण मानती है, तो कानून की मजबूत शाखा को जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर उस पर प्रहार करना चाहिए जो कानून के शासन की सर्वोच्चता को उसके स्रोत और धारा को दूषित करके चुनौती देता है।

इन आरईः प्रशांत भूषण और एएनआर।

44. यद्यपि पी. एन. डूडा (उपर्युक्त) के मामले में, इस न्यायालय ने उक्त मामले के तथ्यों में यह अभिनिर्धारित किया कि यदि मंत्री के भाषण को पूरी तरह से पढ़ा जाए, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि भाषण के विभिन्न हिस्सों से चुनिंदा रूप से लिए गए कुछ हिस्सों से यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि मंत्री द्वारा की गई आलोचना के कारण न्याय प्रशासन में विश्वास हिल गया था। इस न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों को संदर्भित करना प्रासंगिक होगा।

" न्यायिक प्रणाली या न्यायाधीशों के बारे में कोई भी आलोचना जो न्याय के प्रशासन में बाधा डालती है या जो न्याय में विश्वास को कम करती है।

न्यायाधीशों के वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण और न्याय के प्रशासन को उपहास में लाने को रोका जाना चाहिए। अदालती कार्यवाही की अवमानना उस प्रयास से उत्पन्न होती है। निर्णयों की आलोचना की जा सकती है; न्यायाधीशों के उद्देश्यों को जिम्मेदार ठहराने की आवश्यकता नहीं है, यह न्याय के प्रशासन को गहरी बदनामी में लाता है। न्याय के प्रशासन में विश्वास उन स्तंभों में से एक है जिसके माध्यम से लोकतांत्रिक संस्थान कार्य करता है और
बनाए रखता है। विचारों के मुक्त बाजार में न्यायिक प्रणाली या न्यायाधीशों के बारे में आलोचनाओं का स्वागत किया जाना चाहिए, जब तक कि ऐसी आलोचनाएं न्याय के प्रशासन को बाधित या बाधित नहीं करती हैं। इस तरह से अदालतों को किसी व्यक्ति को कथित अवमानना के लिए दंडित करने के लिए न्यायाधीशों के रूप में निहित शक्तियों से संपर्क करना चाहिए, चाहे वह स्वतः संज्ञान लेकर हो या वादी के कहने पर हो।

वकील। 45.
प्रीतम पाल बनाम मध्य उच्च न्यायालय के मामले में

प्रदेश, जबलपुर पंजीयक के माध्यम से, यह न्यायालय एक अधिवक्ता द्वारा दायर एक अपील पर विचार कर रहा था, जिसने अपनी रिट याचिका में अनुकूल निर्णय प्राप्त करने में विफल रहने के बाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के खिलाफ अवमानना याचिका दायर की थी, जिन्होंने उनकी याचिका को खारिज कर दिया था, जिसमें उनके न्यायिक कार्य के निर्वहन में उनके आचरण के खिलाफ अपमानजनक आक्षेप लगाए गए थे, जो उनकी अखंडता, ईमानदारी और न्यायिक निष्पक्षता पर प्रतिबिंबित करते थे। उच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत अधिकार क्षेत्र को लागू करते हुए उनके खिलाफ स्वतः संज्ञान लेते हुए कार्यवाही शुरू की थी और उन्हें आपराधिक अवमानना करने के लिए दोषी ठहराया था।

अपील को खारिज करते हुए, इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

" 60. उक्ति "सालुस पोपुली सुप्रीम लेक्स", अर्थात "लोगों का कल्याण सर्वोच्च कानून है", कानून के विचार को पर्याप्त रूप से व्यक्त करता है। यह तभी प्राप्त किया जा सकता है जब न्याय कानूनी रूप से, न्यायिक रूप से, बिना किसी डर या पक्षपात के और बिना किसी भेदभाव के प्रशासित किया जाए।

न्यायालयों की कार्यवाहियों को विचलित करने या हस्तक्षेप करने से, और न्याय की धाराओं को शुद्ध, निर्मल और निर्मल रखने के लिए, यह न्यायालय का कर्तव्य बन जाता है कि वह अवमानकर्ता को उसकी गरिमा को बनाए रखने के लिए दंडित करे, हालांकि यह दर्दनाक है। कोई भी अवमानना के कानून के संचालन से प्रतिरक्षा का दावा नहीं कर सकता है, यदि अदालत या अदालत की कार्यवाही के संबंध में उसका कार्य या आचरण हस्तक्षेप करता है या न्याय के उचित पाठ्यक्रम में बाधा डालने के लिए गणना की जाती है।

46. इस अदालत ने माना कि लोगों का कल्याण सर्वोच्च है

कानून और यह केवल तभी प्राप्त किया जा सकता है जब न्याय कानूनी रूप से, न्यायिक रूप से, बिना किसी डर या पक्षपात के और बिना किसी बाधा और विफल किए प्रशासित किया जाता है और यह तब तक प्रभावी नहीं हो सकता जब तक कि इसके लिए सम्मान को बढ़ावा और बनाए नहीं रखा जाता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय की अवमानना के लिए एक अधिवक्ता को दंडित करना एक चरम उपाय के रूप में माना जाना चाहिए, लेकिन न्यायालयों की कार्यवाही को भटकने या हस्तक्षेप करने से बचाने के लिए, और न्याय की धाराओं को शुद्ध, निर्मल और निर्मल रखने के लिए, यह न्यायालय का कर्तव्य बन जाता है कि वह अवमानकर्ता को दंडित करे ताकि उसकी गरिमा को संरक्षित किया जा सके।

47. इन री के मामले में: विनय चंद्र मिश्रा ", इस न्यायालय ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में से एक द्वारा उक्त न्यायालय के कार्यवाहक मुख्य न्यायाधीश को संबोधित पत्र के आधार पर स्वतः संज्ञान लिया था, जिसे बदले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को भेज दिया गया था।

भारत। यह देखा गया कि अवमानकर्ता ने विद्वान न्यायाधीश को सभी सीमाओं से परे गाली देने की हद तक चला गया था। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

" 39. कानून का शासन एक लोकतांत्रिक समाज की नींव है। न्यायपालिका कानून के शासन की संरक्षक है। इसलिए न्यायपालिका न केवल तीसरा स्तंभ है, बल्कि लोकतांत्रिक राज्य का केंद्रीय स्तंभ है। हमारे जैसे लोकतंत्र में, जहां एक लिखित संविधान है जो सभी व्यक्तियों और संस्थानों से ऊपर है और जहां न्यायिक समीक्षा की शक्ति उच्च न्यायालयों में निहित है, न्यायपालिका का एक विशेष और अतिरिक्त कर्तव्य है, अर्थात। , यह निरीक्षण करना कि कार्यपालिका और विधायिका सहित सभी व्यक्ति और संस्थान न केवल कानून बल्कि देश के मौलिक कानून के ढांचे के भीतर कार्य करते हैं। यह कर्तव्य इसके अलावा है

11 1 1 (1995) 2 एस. सी. सी. 584 आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

पक्षों के बीच विवादों का न्यायनिर्णयन करने का कार्य जो समाज के शांतिपूर्ण और व्यवस्थित विकास के लिए आवश्यक है। यदि न्यायपालिका को अपने कर्तव्यों और कार्यों को प्रभावी ढंग से निभाना है और उस भावना के प्रति सच्चा रहना है जिसके साथ उन्हें पवित्र रूप से सौंपा गया है, तो अदालतों की गरिमा और अधिकार का हर कीमत पर सम्मान और रक्षा की जानी चाहिए। अन्यथा, हमारी संवैधानिक योजना की आधारशिला ही रास्ता छोड़ देगी और इसके साथ ही समाज में कानून का शासन और सभ्य जीवन गायब हो जाएगा। यह इस उद्देश्य के लिए है कि अदालतों को असाधारण शक्ति सौंपी गई है

उन लोगों को दंडित करना जो अदालतों के अंदर या बाहर ऐसे कृत्यों में लिप्त होते हैं, जो उनके अधिकार को कमजोर करते हैं और उन्हें बदनाम करके और बिना किसी डर या पक्षपात के अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में बाधा डालकर उन्हें बदनाम और अनादर में लाते हैं। जब

अदालत इस शक्ति का प्रयोग व्यक्तिगत रूप से हमला किए गए या बदनाम किए गए व्यक्तिगत न्यायाधीश की गरिमा और सम्मान को सही साबित करने के लिए नहीं करती है, बल्कि कानून और न्याय के प्रशासन की महिमा को बनाए रखने के लिए करती है। न्यायपालिका की नींव निडर और निष्पक्ष न्याय देने की अपनी क्षमता में लोगों का विश्वास और विश्वास है। जब नींव स्वयं उन कृत्यों से हिल जाती है जो अदालत के काम में अविश्वास पैदा करके अदालत के अधिकार के लिए असंतोष और अनादर पैदा करते हैं, तो अदालत की इमारत

न्यायिक प्रणाली नष्ट हो जाती है।

48. यह न्यायालय मानता है कि न्यायपालिका कानून के शासन की संरक्षक है और लोकतांत्रिक राज्य का केंद्रीय स्तंभ है। यह मानता है कि हमारे देश में लिखित संविधान सभी व्यक्तियों और संस्थानों से ऊपर है और न्यायपालिका का एक विशेष और अतिरिक्त कर्तव्य है जिसका पालन करना है -

यह देखरेख करना कि कार्यपालिका और विधायिका सहित सभी व्यक्ति और संस्थान न केवल कानून बल्कि देश के मौलिक कानून के ढांचे के भीतर कार्य करते हैं। इसमें आगे कहा गया है कि यह कर्तव्य पक्षों के बीच विवादों का न्यायनिर्णयन करने के कार्य से अलग है, जो समाज के शांतिपूर्ण और व्यवस्थित विकास के लिए आवश्यक है। इसका मानना है कि यदि न्यायपालिका को अपने कर्तव्यों और कार्यों को प्रभावी ढंग से निभाना है और उस भावना के प्रति सच्चा रहना है जिसके साथ उन्हें पवित्र रूप से सौंपा गया है, तो अदालतों की गरिमा और अधिकार का हर कीमत पर सम्मान और रक्षा की जानी चाहिए। यह माना गया है कि अन्यथा, हमारी संवैधानिक योजना की आधारशिला ही रास्ता छोड़ देगी और इसके साथ ही कानून का शासन और समाज में सभ्य जीवन गायब हो जाएगा। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इस उद्देश्य के लिए न्यायालयों को दंड देने की असाधारण शक्ति सौंपी गई है। जो अदालतों के अंदर या बाहर कृत्यों में लिप्त होते हैं, जो [2020] 8 एस. सी. आर.

वे अपने अधिकार को कमजोर करते हैं और उन्हें बदनाम करके और बिना किसी डर या पक्षपात के अपने कर्तव्यों के निर्वहन में बाधा डालकर उन्हें बदनाम और अनादर में लाते हैं। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब न्यायालय इस शक्ति का प्रयोग करता है, तो वह व्यक्तिगत रूप से हमला किए गए या बदनाम किए गए व्यक्तिगत न्यायाधीश की गरिमा और सम्मान को सही साबित करने के लिए ऐसा नहीं करता है, बल्कि कानून और न्याय प्रशासन की महिमा को बनाए रखने के लिए ऐसा करता है। यह माना गया है कि न्यायपालिका की नींव निडर और निष्पक्ष न्याय देने की अपनी क्षमता में लोगों का विश्वास और विश्वास है। जब नींव स्वयं उन कृत्यों से हिल जाती है जो अदालत के काम में अविश्वास पैदा करके अदालत के अधिकार के लिए असंतोष और अनादर पैदा करते हैं, तो न्यायिक प्रणाली की इमारत नष्ट हो जाती है।

49. डॉ. डी. सी. सक्सेना बनाम भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश के मामले में एक जनहित याचिका के माध्यम से अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका दायर की गई थी। सी. जे. आई. के खिलाफ अपमानजनक आरोप लगाना। इस न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

" 33. एक नागरिक को बड़े पैमाने पर जनता के ध्यान में लाने का अधिकार है जिससे न्यायपालिका सहित कोई भी संस्थान पीड़ित है। वास्तव में, स्वस्थ और रचनात्मक आलोचना करने का अधिकार जो भावना में उचित है, उसे स्वयं संस्था के हित में अप्रभावित छोड़ दिया जाना चाहिए। आलोचक सुधार के साधन होते हैं, लेकिन वे नहीं जो द्वेष से प्रेरित होते हैं, बल्कि वे जो जनता से प्रेरित होते हैं

आराम करें। न्यायपालिका सहित किसी भी प्रणाली या संस्थान की प्रामाणिक आलोचना का उद्देश्य प्रणाली या संस्थान के प्रशासन को अपने भीतर देखने और अपनी सार्वजनिक छवि में सुधार करने के लिए प्रेरित करना है। अदालतें,

राज्य के साधन संविधान और कानूनों के अधीन हैं और आलोचना से परे नहीं हैं। स्वस्थ और रचनात्मक आलोचना इसके कार्यों में सुधार के लिए इसके फोरेंसिक उपकरणों को बढ़ाने के उपकरण हैं। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और निडर न्याय का एक सामंजस्यपूर्ण मिश्रण और संतुलित अस्तित्व यह सलाह देता है कि कानून को आलोचना के प्रति चतुर होना चाहिए। रचनात्मक सार्वजनिक आलोचना भले ही वह थोड़ी अधिक हो इस प्रकार इसकी सीमाएँ सार्वजनिक संस्थानों के लोकतांत्रिक स्वास्थ्य को संरक्षित करने में उपयोगी भूमिका निभाती हैं। अधिनियम की धारा 5 ऐसी निष्पक्ष आलोचना को संरक्षण प्रदान करती है और न्यायालय की अवमानना से बचाती है। सबसे अच्छा तरीका

न्यायाधीश के पद की गरिमा और सम्मान को बनाए रखना निर्णय, निर्णय की गुणवत्ता, संयम, गरिमा और गरिमा के लिए उत्पन्न होने वाले मुद्दों के प्रति दृष्टिकोण की निडरता और निष्पक्षता द्वारा बड़े पैमाने पर जनता से सम्मान के योग्य है।

बंद और बेंच और शुद्धता पर आचरण करें "।

12 (1996) 5 एस. सी. सी. 216 आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

50. यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एक नागरिक बड़े पैमाने पर जनता के ध्यान में उन दुर्बलताओं को लाने का हकदार है जिनसे आई. ए. आर. आई. सहित कोई भी संस्थान पीड़ित है। यह भी माना गया है कि उदार और रचनात्मक आलोचना करने का अधिकार, जो भावना में उचित है, छोड़ दिया जाना चाहिए।स्वयं संस्था के हित में जोड़ा गया। यह माना गया है कि ये सुधार के साधन हैं, लेकिन वे नहीं जो द्वेष से प्रेरित हैं, बल्कि जो सार्वजनिक स्वास्थ्य से प्रेरित हैं। यह भी माना गया है कि विनाशकारी सार्वजनिक आलोचना भले ही अपनी सीमाओं से थोड़ी अधिक हो, इस प्रकार सार्वजनिक संस्थानों के लोकतांत्रिक स्वास्थ्य को संरक्षित करने में उपयुक्त भूमिका निभाती है।

51. इस न्यायालय ने आगे इस प्रकार टिप्पणी कीः

" 40. इसलिए अदालत को बदनाम करने का मतलब न्यायाधीशों की न्यायाधीश या न्यायपालिका के रूप में शत्रुतापूर्ण आलोचना करना होगा। किसी न्यायाधीश पर उसके पद के संबंध में किसी भी व्यक्तिगत हमले से मानहानि या बदनामी के कानून के तहत निपटा जाता है। फिर भी एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश से संबंधित मानहानिकारक प्रकाशन अदालत या न्यायाधीशों को अवमानना में लाता है, जो न्याय के लिए एक गंभीर बाधा है और न्याय की महिमा पर एक बाधा है। न्यायालय की गरिमा को कम करने के लिए सोचा गया न्यायाधीश का कोई भी कैरिकेचर न्याय के प्रशासन या न्याय की महिमा में जनता के विश्वास को नष्ट, कमजोर या कमजोर कर देगा। इसलिए, यह एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश को बदनाम करना होगा, दूसरे शब्दों में, पक्षपात, भ्रष्टाचार, पूर्वाग्रह, एक न्यायाधीश के लिए अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाना अदालत का अपमान है और अदालत की अवमानना होगी। यहां तक कि किसी न्यायाधीश पर अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में निष्पक्षता या निष्पक्षता की कमी का आरोप लगाना भी अवमानना के बराबर है। अपराध की गंभीरता उसकी गरिमा या अधिकार को कम करना है या

न्याय की महानता का अपमान। जब अवमानकर्ता न्यायालय के अधिकार को चुनौती देता है, तो वह न्यायाधीश के कार्यालय या न्यायिक प्रक्रिया या न्याय के प्रशासन के कर्तव्यों के प्रदर्शन में हस्तक्षेप करता है या न्यायाधीश या न्यायपालिका को अवमानना में लाने की प्रवृत्ति पैदा करता है। इसलिए अधिनियम की धारा 2 (सी) आपराधिक अवमानना को व्यापक अभिव्यक्ति में परिभाषित करती है कि कोई भी प्रकाशन, चाहे वह शब्दों द्वारा, बोले गए या लिखित, या संकेतों द्वारा, या दृश्य अभ्यावेदन द्वारा, या अन्यथा किसी मामले का या किसी अन्य कार्य को करना जो किसी भी अदालत के अधिकार को कम करता है या कम करता है या कम करता है; या पूर्वाग्रह, या हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है। न्यायिक कार्यवाही; या किसी भी [2020] एस. सी. आर. में न्याय के प्रशासन में हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है, या बाधा डालता है या बाधा डालता है।

अन्य तरीका, एक आपराधिक अवमानना है। इसलिए, अदालत को बदनाम करने की प्रवृत्ति या अदालत के अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति या किसी भी तरह से न्याय के प्रशासन में बाधा डालने की प्रवृत्ति या चुनौती देने की प्रवृत्ति।

न्याय का अधिकार या महिमा, एक आपराधिक अवमानना होगी। उल्लङ्घनकारी कार्य के अलावा, कोई भी प्रवृत्ति यदि यह अदालत के अधिकार को कम कर सकती है या कम कर सकती है, तो यह एक आपराधिक अवमानना है। अवमानक का कोई भी आचरण जो प्रवृत्ति रखता है या एक प्रवृत्ति पैदा करता है न्यायाधीश या न्यायालय को अवमानना में लाना या न्यायालय के अधिकार को कम करना भी न्यायालय की अवमानना होगी।

52. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि इस न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायाधीशों की न्यायाधीश या न्यायपालिका के रूप में शत्रुतापूर्ण आलोचना के बराबर होगी

न्यायालय को बदनाम करना। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी पर कोई व्यक्तिगत हमला

न्यायाधीश के पद के संबंध में उसके साथ मानहानि या बदनामी के कानून के तहत व्यवहार किया जाता है। फिर भी एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश से संबंधित मानहानिकारक प्रकाशन अदालत या न्यायाधीशों को अवमानना में लाता है, जो न्याय के लिए एक गंभीर बाधा है और न्याय की महिमा पर एक बाधा है। इस न्यायालय ने आगे कहा कि न्यायालय की गरिमा को कम करने के लिए सोचा गया किसी भी न्यायाधीश का कैरिकेचर न्याय के प्रशासन या न्याय की महिमा में जनता के विश्वास को नष्ट, कमजोर या कमजोर कर देगा। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी न्यायाधीश पर पक्षपात, भ्रष्टाचार, पूर्वाग्रह, अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाना अदालत का अपमान है और यह अदालत की अवमानना होगी। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अपराध की गंभीरता उसकी गरिमा या अधिकार को कम करना या न्याय की महिमा का अपमान करना है। इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 2 (सी) व्यापक अभिव्यक्ति में 'आपराधिक अवमानना' को परिभाषित करती है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय को बदनाम करने की प्रवृत्ति या न्यायालय के अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति या किसी भी तरह से न्याय के प्रशासन में बाधा डालने की प्रवृत्ति या

न्याय के अधिकार या महिमा को चुनौती देना आपराधिक अवमानना होगी।

53. उच्चतम न्यायालय बार एसोसिएशन बनाम भारत संघ और अन्य 1,3 के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने इस प्रकार अभिनिर्धारित कियाः

" 42. न्यायालय की अवमानना एक विशेष अधिकार क्षेत्र है जिसका उपयोग संयम और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए जब भी कोई कार्य न्याय के प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है या जो इसके पाठ्यक्रम में बाधा डालता है या न्यायिक संस्थानों में जनता के विश्वास को हिलाता है। इस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग तब भी किया जा सकता है जब शिकायत किए गए अधिनियम से कानून की महिमा या अदालतों की गरिमा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। द.

13 (1998) 4 एस. सी. सी. 409 आर. ई.:

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अवमानना क्षेत्राधिकार का उद्देश्य न्यायालयों की महिमा और गरिमा को बनाए रखना है। यह एक असामान्य प्रकार का संयुक्त अधिकार क्षेत्र है।

और इसमें कोई अनुचित हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए न्याय का प्रशासन। यह अदालत और अवमानकर्ता के बीच का मामला है और तीसरा पक्ष हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। इसका प्रयोग न्याय प्रशासन, महामहिम की सहायता के लिए संक्षिप्त तरीके से किया जाता है।

कानून और न्यायालयों की गरिमा। ऐसे किसी भी कार्य की अनुमति नहीं दी जा सकती है जिसमें न्याय प्रशासन की निष्पक्षता और निष्पक्षता में जनता के विश्वास को हिलाने की प्रवृत्ति हो।

54. संविधान पीठ की टिप्पणियाँ इस कानूनी स्थिति को दोहराती हैं कि अवमानना क्षेत्राधिकार, जो एक विशेष क्षेत्राधिकार है, का उपयोग संयम और सावधानी के साथ किया जाना चाहिए, जब भी कोई कार्य न्याय के प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है या जो इसके पाठ्यक्रम में बाधा डालता है या न्यायिक संस्थानों में जनता के विश्वास को हिलाता है। इस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग तब भी किया जा सकता है जब शिकायत किए गए अधिनियम से कानून की गरिमा या अदालतों की गरिमा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसका उद्देश्य

अवमानना का अधिकार क्षेत्र न्यायालयों की महिमा और गरिमा को बनाए रखना है। इस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किसी व्यक्तिगत न्यायाधीश की गरिमा की रक्षा के लिए नहीं किया जाना है, बल्कि न्याय प्रशासन को बदनाम होने से बचाने के लिए किया जाना है। यह दोहराया जाता है कि समुदाय के सामान्य हित में, यह अनिवार्य है कि अदालतों के अधिकार को खतरे में नहीं डाला जाना चाहिए और

न्याय के प्रशासन में कोई अनुचित हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए। यह दोहराया गया है कि ऐसे किसी भी कार्य की अनुमति नहीं दी जा सकती है, जिसमें निष्पक्षता में जनता के विश्वास को हिलाने की प्रवृत्ति हो।

और न्याय प्रशासन की निष्पक्षता।

55. अरुंधति राय के मामले में, 1 रुपये में, इस न्यायालय ने टिप्पणी की

इस प्रकारः

" 28. जैसा कि पहले ही कहा जा चुका है, न्यायाधीश के आचरण, न्यायपालिका की संस्था और उसके कामकाज की निष्पक्ष आलोचना अगर सद्भावना और जनहित में की जाती है तो यह अवमानना नहीं हो सकती है। सद्भावना और जनहित का पता लगाने के लिए अदालतों को

व्यक्ति सहित आसपास की सभी परिस्थितियों को देखें

टिप्पणियों के लिए जिम्मेदार, उस क्षेत्र में उसका ज्ञान जिसके बारे में टिप्पणियां की जाती हैं और इच्छित उद्देश्य को प्राप्त करने की कोशिश की जाती है। सभी नागरिकों को निष्पक्ष आलोचना के नाम पर अदालतों के आचरण पर टिप्पणी करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

जाँच की गई, यह संस्था को ही नष्ट कर देगा। "

56. इस न्यायालय ने इस स्थिति को दोहराया कि एक न्यायाधीश के आचरण, न्यायपालिका की संस्था और उसके कामकाज की निष्पक्ष आलोचना अवमानना के बराबर नहीं हो सकती है, अगर इसे सद्भावना और सार्वजनिक हित में किया जाता है। सद्भावना और जनहित का पता लगाने के लिए, अदालतों को टिप्पणियों के लिए जिम्मेदार व्यक्ति, उस क्षेत्र में उसका ज्ञान जिसके बारे में टिप्पणियां की जाती हैं और इच्छित उद्देश्य को प्राप्त करने सहित आसपास की सभी परिस्थितियों को देखना होता है।

57. इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि यह अच्छी तरह से तय है कि एक नागरिक अनुच्छेद 19 (1) के तहत अधिकार का प्रयोग करते हुए इसकी उचित आलोचना करने का हकदार है।

एक न्यायाधीश, न्यायपालिका और उसकी कार्यप्रणाली। हालाँकि, अनुच्छेद 19 (1) के तहत अधिकार अनुच्छेद 19 के खंड (2) के तहत प्रतिबंध के अधीन है। अनुच्छेद 19 (1) के तहत अधिकार और अनुच्छेद 19 के खंड (2) के तहत उचित प्रतिबंध को ठीक से संतुलित करने का प्रयास किया जाना चाहिए। यदि कोई नागरिक अनुच्छेद 19 (1) के तहत अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए सीमाओं को पार करता है और एक बयान देता है, जो न्यायाधीशों और संस्थानों को बदनाम करने की प्रवृत्ति रखता है

न्याय प्रशासन, ऐसी कार्रवाई अदालत की अवमानना के दायरे में आएगी। यदि कोई नागरिक ऐसा बयान देता है जो

इस न्यायालय की गरिमा और अधिकार को कम करता है, यह 'आपराधिक अवमानना' के दायरे में आएगा। जब इस तरह का बयान न्यायिक संस्थानों में जनता के विश्वास को हिलाता है, तो यह भी 'आपराधिक अवमानना' के दायरे में आ जाएगा।

58. इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब किसी न्यायाधीश के खिलाफ बयान दिया जाता है

एक व्यक्ति, अवमानना क्षेत्राधिकार उपलब्ध नहीं होगा। हालांकि, जब एक न्यायाधीश के रूप में एक न्यायाधीश के खिलाफ बयान दिया जाता है और जिसका न्याय के प्रशासन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है, तो न्यायालय निश्चित रूप से अवमानना क्षेत्राधिकार का आह्वान करने का हकदार होगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि अनुच्छेद 19 (1) के तहत निष्पक्ष आलोचना के अधिकार का प्रयोग करते हुए, यदि कोई नागरिक जनहित में सही तरीके से अधिकार का उल्लंघन करता है, तो यह न्यायालय अवमानना अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने और उदारता दिखाने में धीमा होगा। हालाँकि, जब न्यायपालिका की छवि को खराब करने के लिए इस तरह के बयान की गणना की जाती है, तो न्यायालय मूक दर्शक नहीं रहेगा। जब इस न्यायालय के अधिकार पर हमला किया जाता है, तो न्यायालय आरई में नहीं होगाः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

एक दर्शक। विल्मोट, सी. जे. द्वारा समझाया गया और बारदाकांत मिश्रा मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा अनुमोदित 'प्राधिकरण' शब्द

(उपर्युक्त) का अर्थ न्यायाधीशों की बलपूर्वक शक्ति नहीं है, बल्कि एक सम्मान और सम्मान है जो उनके न्याय और अखंडता की राय से उन्हें और उनके कार्यों को दिया जाता है।

59. जैसा कि श्री दवे द्वारा प्रस्तुत किया गया है, बारदाकांत मिश्रा (उपरोक्त) के मामले में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर द्वारा किए गए अवलोकन पर भरोसा करते हुए, यदि

प्रणाली में प्रणालीगत सुधार को सक्षम करने के लिए रचनात्मक आलोचना की जाती है, न्यायालय अवमानना क्षेत्राधिकार का आह्वान नहीं करेगा। हालाँकि, जैसा कि उसी विद्वान न्यायाधीश ने री में कहा हैः एस. मुलगांवकर, न्यायालय गंभीरता और गंभीरता के साथ कार्य करेगा जहां न्याय खतरे में है

न्यायाधीशों पर घोर और/या निराधार हमले द्वारा और जहां हमले की गणना न्यायिक प्रक्रिया में बाधा डालने या नष्ट करने के लिए की जाती है। न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने आगे कहा कि कारकों की समग्रता का मूल्यांकन करने के बाद, यदि न्यायालय न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर हमले को निंदनीय मानता है, तो

अपमानजनक, डराने-धमकाने वाला या क्षमा करने योग्य सीमाओं से परे दुर्भावनापूर्ण, कानून की मजबूत शाखा को जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर उस पर प्रहार करना चाहिए, जो कानून के शासन की सर्वोच्चता को उसके स्रोत और धारा को दूषित करके चुनौती देता है।

60. इन मार्गदर्शक सिद्धांतों के आलोक में, आइए हम कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 द्वारा किए गए ट्वीट्स का विश्लेषण करें, जिन्होंने जन्म दिया है।

इस कार्यवाही के लिए।

संविधान का अनुच्छेद 19 (1) व्यवस्था की निष्पक्ष आलोचना के रूप में, व्यापक सार्वजनिक हित में सद्भावना में किया गया है या नहीं। 62. हमने दोनों ट्वीट्स को 22.7.2020 के क्रम में पुनः प्रस्तुत किया है, जिसे शुरुआत में पुनः प्रस्तुत किया गया है। पहले ट्वीट के पहले भाग में कहा गया है कि सीजेआई राजभवन, नागपुर में बिना मास्क या हेलमेट के एक भाजपा नेता की 50 लाख मोटरसाइकिल की सवारी करते हैं। ट्वीट के इस हिस्से को एक व्यक्ति के रूप में सीजेआई के खिलाफ की गई आलोचना कहा जा सकता है न कि सीजेआई के रूप में सीजेआई के खिलाफ। हालाँकि, ट्वीट के दूसरे भाग में कहा गया है, 'ऐसे समय में जब वह सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखते हैं, नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकारों से वंचित करते हैं'। निर्विवाद रूप से, बयान का उक्त हिस्सा भारत के मुख्य न्यायाधीश यानी देश की न्यायपालिका के प्रशासनिक प्रमुख के रूप में सीजेआई की आलोचना करता है। ट्वीट का कथित हिस्सा एक आम आदमी को यह धारणा देने का प्रयास करता है कि सीजेआई एक [2020] 8 एस. सी. आर. से संबंधित 50 लाख मोटरसाइकिल की सवारी कर रहे हैं।

राजभवन, नागपुर में भाजपा नेता बिना मास्क या हेलमेट के, ऐसे समय में जब उन्होंने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है और नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित कर दिया है। उक्त ट्वीट एक आम आदमी को यह आभास देने में सक्षम है कि सीजेआई एक भाजपा नेता की 1 लाख रुपये की मोटरसाइकिल पर अपनी सवारी का आनंद ले रहे हैं, ऐसे समय में जब उन्होंने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है जो नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित कर रहा है।

63. सबसे पहले, यह ध्यान दिया जाएगा कि जिस तारीख को सीजेआई पर मोटरसाइकिल की सवारी करने का आरोप है, वह उस अवधि के दौरान है जब सुप्रीम कोर्ट गर्मियों की छुट्टी पर था। किसी भी मामले में, उक्त अवधि के दौरान भी, न्यायालय की अवकाश पीठ नियमित रूप से काम कर रही थीं। उक्त ट्वीट यह धारणा देना चाहता है कि भारतीय न्यायपालिका के प्रमुख के रूप में सीजेआई ने सर्वोच्च न्यायालय को लॉकडाउन मोड में रखा है, जिससे नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित किया गया है। किसी भी मामले में, यह कथन, कि सर्वोच्च न्यायालय लॉकडाउन में है, कथित अवमानक संख्या 1 की जानकारी में भी तथ्यात्मक रूप से गलत है। यह एक सामान्य ज्ञान है कि कोविड-19 महामारी के कारण न्यायालय के भौतिक कामकाज को निलंबित करने की आवश्यकता थी। यह सर्वोच्च न्यायालय में सामूहिक सभा से बचने और महामारी के प्रकोप को रोकने के लिए था। हालाँकि, भौतिक सुनवाई के निलंबन के तुरंत बाद, न्यायालय ने वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से काम करना शुरू कर दिया। 23.3.2020 से 4.8.2020 तक, न्यायालय की विभिन्न पीठें नियमित रूप से बैठती रही हैं और वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से अपने कर्तव्यों का निर्वहन करती रही हैं। 23.3.2020 से 4.8.2020 तक विभिन्न पीठों की कुल बैठकों की संख्या 879 है। इस अवधि के दौरान न्यायालय ने 12748 मामलों की सुनवाई की है। उक्त अवधि में, इस न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर 686 रिट याचिकाओं पर विचार किया है।

64. इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि यह बयान कि सीजेआई ने सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखा है, नागरिकों को उनके मौलिक अधिकारों से वंचित कर दिया है

न्याय तक पहुँचने का अधिकार स्पष्ट रूप से गलत है। यह उल्लेख करना अनुचित नहीं होगा कि कथित अवमानक नंबर 1 स्वयं वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से कई मामलों में विभिन्न अवसरों पर पेश हुआ है। इतना ही नहीं, बल्कि अपनी व्यक्तिगत क्षमता में भी कथित अवमाननाकर्ता संख्या 1 ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत 2020 की रिट याचिका (आपराधिक) No.131 के तहत एक याचिका में इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाकर न्याय तक पहुँच का सहारा लिया है, जिसमें भक्तिनगर पुलिस स्टेशन, राजकोट, गुजरात में उनके खिलाफ दर्ज प्रथम सूचना रिपोर्ट को चुनौती दी गई है, जिसमें इस न्यायालय ने 1.5.2020 पर निम्नलिखित आदेश पारित किया थाः

इन आरईः प्रशांत भूषण और एएनआर।

" न्यायालय की बैठक वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से आयोजित की जाती है।

नोटिस जारी करें। इस बीच, 12 तारीख को दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट No.11209052200180 में याचिकाकर्ता के खिलाफ कोई दंडात्मक कार्रवाई नहीं की जाए।

अप्रैल, 2020 में आई. पी. सी. की धारा 295 ए/505 (1) (बी), 34 और 120 बी के तहत पुलिस स्टेशन भक्तिनगर, राजकोट, गुजरात में दर्ज किया गया।

इस आधार पर, इस तरह के बेबुनियाद आरोप लगाने से यह धारणा बनती है कि सीजेआई एक महंगी बाइक की सवारी का आनंद ले रहे हैं, जबकि वह सुप्रीम कोर्ट को लॉकडाउन मोड में रखते हैं और इस तरह नागरिकों को न्याय प्राप्त करने के उनके मौलिक अधिकार से वंचित करते हैं, निस्संदेह गलत, दुर्भावनापूर्ण और निंदनीय है। यह न्यायपालिका की संस्था और सीजेआई की संस्था में बड़े पैमाने पर जनता के विश्वास को हिलाने और न्याय प्रशासन की गरिमा और अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति रखता है। हम कथित अवमानकर्ता नंबर 1 के इस तर्क को स्वीकार करने में असमर्थ हैं कि उक्त बयान अदालतों के भौतिक रूप से काम न करने की उनकी पीड़ा के कारण उनके द्वारा की गई एक प्रामाणिक आलोचना थी। उनका यह तर्क कि पिछले तीन महीनों से अधिक समय से उच्चतम न्यायालय के काम न करने के कारण, नागरिकों के मौलिक अधिकारों, जैसे कि हिरासत में लिए गए लोगों, निराश्रितों और गरीबों, और गंभीर और तत्काल शिकायतों का सामना कर रहे अन्य लोगों को संबोधित नहीं किया जा रहा था या निवारण के लिए नहीं लिया जा रहा था, जैसा कि ऊपर बताया गया है, उनकी अपनी जानकारी में गलत है। उन्होंने न केवल एक वकील के रूप में बल्कि एक वादी के रूप में भी उक्त अवधि के दौरान न्याय तक पहुँच के अधिकार का लाभ उठाते हुए ऐसा निंदनीय और दुर्भावनापूर्ण बयान दिया है।

65. जहाँ तक दूसरे ट्वीट का सवाल है, उसके अनुसार भी

कथित अवमानकर्ता नंबर 1, ट्वीट तीन अलग-अलग भागों में है। उनके अनुसार, ट्वीट के पहले भाग में उनकी सुविचारित राय है कि पिछले छह वर्षों के दौरान भारत में लोकतंत्र को काफी हद तक नष्ट कर दिया गया है। दूसरा भाग उनकी राय है कि सर्वोच्च न्यायालय ने लोकतंत्र के विनाश की अनुमति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और तीसरा भाग पिछले 4 मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में उनकी राय है। विशेष रूप से इसकी अनुमति देने में।

66. हम ट्वीट के पहले भाग से चिंतित नहीं हैं क्योंकि यह इस अदालत से संबंधित नहीं है। हालाँकि, अपने स्वयं के स्वीकार करने पर भी, उन्होंने अपनी राय व्यक्त की है, कि सर्वोच्च न्यायालय ने लोकतंत्र को नष्ट करने और आगे बढ़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

यह स्वीकार किया कि तीसरा भाग विशेष रूप से अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की भूमिका के बारे में है, जो इसकी अनुमति देते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

67. यह सर्वविदित है कि आपातकाल के युग को भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में सबसे काला युग माना गया है। उक्त ट्वीट एक आम नागरिक को जो धारणा देता है, वह यह है कि जब भविष्य में इतिहासकार पीछे मुड़कर देखेंगे, तो उन्हें यह धारणा मिलेगी

यह है कि पिछले छह वर्षों में भारत में बिना किसी औपचारिक आपातकाल के लोकतंत्र को नष्ट कर दिया गया है और उक्त विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की विशेष भूमिका थी और भारत के अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की उक्त विनाश में अधिक विशेष भूमिका थी।

68. इसमें किसी भी तरह का संदेह नहीं हो सकता है कि उक्त ट्वीट उच्चतम न्यायालय के खिलाफ निर्देशित किया गया है, यह धारणा देने के लिए कि पिछले छह वर्षों में लोकतंत्र के विनाश में सर्वोच्च न्यायालय की विशेष भूमिका है और पिछले चार मुख्य न्यायाधीशों की इसमें अधिक विशेष भूमिका थी। यह स्पष्ट है कि आलोचना पूरे उच्चतम न्यायालय और अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों के खिलाफ है। आलोचना किसी विशेष के खिलाफ नहीं है। न्यायाधीश लेकिन उच्चतम न्यायालय की संस्था और भारत के मुख्य न्यायाधीश की संस्था। उक्त ट्वीट इस धारणा को व्यक्त करता है कि पिछले छह वर्षों की अवधि में सर्वोच्च न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीशों की भारत के विनाश में विशेष भूमिका है।

लोकतंत्र और अंतिम चार मुख्य न्यायाधीशों की इसमें अधिक विशेष भूमिका थी।

69. जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, इस बात पर विचार करते हुए कि क्या उक्त आलोचना सद्भावना से की गई थी या नहीं

परिस्थितियों पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। उपस्थित परिस्थितियों में से एक प्रकाशन की सीमा है। ट्वीट द्वारा प्रकाशन लाखों लोगों तक पहुंचता है और इस तरह, इतनी बड़ी मात्रा में प्रकाशन भी उन कारकों में से एक होगा जिन पर सद्भावना के सवाल पर विचार करते समय विचार करने की आवश्यकता है। 70. एक अन्य परिस्थिति यह है कि जो व्यक्ति इस तरह का बयान देता है। स्वयं स्वीकार करते हुए, कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1 पिछले 30 वर्षों से सर्वोच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय में वकालत कर रहा है और उसने हमारे लोकतंत्र और उसके संस्थानों के स्वास्थ्य और विशेष रूप से हमारी न्यायपालिका के कामकाज और विशेष रूप से इसकी जवाबदेही से संबंधित जनहित के कई मुद्दों को लगातार उठाया है। द.

कथित अवमानक, कानून की महिमा की रक्षा करने के बजाय, न्याय के प्रशासन की संस्था का हिस्सा होने के कारण, एक ऐसे कार्य में लिप्त हो गया है, जो न्याय के प्रशासन की संस्था को बदनाम करता है। कथित अवमानकर्ता संख्या 1 से इस न्यायालय के एक जिम्मेदार अधिकारी के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है। घृणित आरोप, जो दुर्भावनापूर्ण प्रकृति के हैं और अदालत को बदनाम करने की प्रवृत्ति रखते हैं, किसी व्यक्ति से अपेक्षित नहीं हैं, आईएन आरईः

जो 30 साल का वकील है। हमारे सुविचारित विचार में, यह नहीं कहा जा सकता है कि उपरोक्त ट्वीट्स को न्यायपालिका के कामकाज की निष्पक्ष आलोचना कहा जा सकता है, जिसे जनहित में प्रामाणिक बनाया गया है।

71. जैसा कि इस न्यायालय ने पहले के निर्णयों में कहा था, जिनका हमने ऊपर उल्लेख किया है, भारतीय न्यायपालिका केवल एक स्तंभ नहीं है।

जो भारतीय लोकतंत्र खड़ा है लेकिन केंद्रीय स्तंभ है। भारतीय संवैधानिक लोकतंत्र कानून के शासन के आधार पर खड़ा है। न्यायिक प्रणाली में देश के नागरिकों का विश्वास, विश्वास और विश्वास कानून के शासन के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य है। संवैधानिक लोकतंत्र की नींव को हिलाने के प्रयास से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। ट्वीट में बहुत ही अस्थिर करने का प्रभाव है

सन्देह है कि यह ट्वीट न्यायपालिका की संस्था में जनता के विश्वास को हिला देता है। हम ट्वीट के पहले भाग की सच्चाई या अन्यथा में नहीं जाना चाहते हैं, क्योंकि हम इस कार्यवाही को राजनीतिक बहस के मंच में बदलना नहीं चाहते हैं। हम केवल न्याय प्रशासन की संस्था को होने वाले नुकसान से चिंतित हैं। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण से उक्त ट्वीट भारत के सर्वोच्च न्यायालय और सीजेआई की संस्था की गरिमा और अधिकार को कम करता है और सीधे कानून की महिमा का सामना करता है।

72. भारतीय न्यायपालिका को देश के नागरिक सर्वोच्च सम्मान के साथ देखते हैं। जब कोई नागरिक कहीं भी न्याय पाने में विफल रहता है तो न्यायपालिका को अंतिम उम्मीद माना जाता है। सर्वोच्च न्यायालय भारतीय न्यायपालिका का प्रतीक है। उच्चतम न्यायालय पर हमले से न केवल एक सामान्य वादी को सर्वोच्च न्यायालय में विश्वास खोने का प्रभाव पड़ता है, बल्कि देश के अन्य न्यायाधीशों के मन में भी सर्वोच्च न्यायालय में विश्वास खो सकता है। अन्य न्यायाधीशों को यह आभास होने की संभावना है कि वे दुर्भावनापूर्ण हमलों से सुरक्षित नहीं रह सकते हैं, जब सर्वोच्च न्यायालय सुरक्षा देने में विफल रहा है स्वयं दुर्भावनापूर्ण आक्षेपों से इंकार नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, व्यापक जनहित की रक्षा के लिए, देश की सर्वोच्च न्यायपालिका पर हमले के ऐसे प्रयासों से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि जब न्यायाधीशों या न्याय प्रशासन की संस्था की आलोचना की जाती है तो न्यायालय को उदार होने की आवश्यकता होती है। हालाँकि, इस तरह की उदारता को इस हद तक नहीं बढ़ाया जा सकता है, जो [2020] 8 एस. सी. आर. हो सकता है।

न्यायपालिका की संस्था की नींव पर दुर्भावनापूर्ण, घृणित, सुनियोजित हमले से निपटने में कमजोरी और इस तरह लोकतंत्र की नींव को नुकसान पहुंचाना।

73. भारतीय संविधान ने इस देश की संवैधानिक अदालतों को एक विशेष भूमिका दी है। सर्वोच्च न्यायालय एक रक्षक है नागरिकों के मौलिक अधिकारों के साथ-साथ लोकतंत्र के अन्य स्तंभों यानी कार्यपालिका और प्रशासन को बनाए रखने का कर्तव्य भी दिया गया है।

विधायिका, संवैधानिक सीमाओं के भीतर। यदि न्यायपालिका की संस्था में बड़े पैमाने पर जनता के विश्वास को हिलाने के लिए हमला किया जाता है, तो इस तरह के हमले से सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायपालिका के लिए कई मामलों में उदारता से इसे अपनाना बेहतर हो सकता है।

धर्मार्थ रवैया तब भी जब इसके संचालन की पूरी तरह से अनुचित और अनुचित आलोचना सुधार के लिए प्रामाणिक चिंता से की जाती है। हालाँकि, जब ऐसी कोई योजना और योजना दिखाई देती है जो हमारी न्यायिक प्रणाली में विश्वास को नुकसान पहुँचाने और दुर्भावनापूर्ण हमले करके सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का मनोबल गिराने की प्रवृत्ति रखती है, तो निडर, निष्पक्ष और अडिग न्याय के उच्च मानकों को बनाए रखने में रुचि रखने वालों को दृढ़ता से खड़ा होना होगा। यदि इस तरह के हमले से अपेक्षित दृढ़ता के साथ निपटा नहीं जाता है, तो यह राष्ट्रों के समुदाय में राष्ट्रीय सम्मान और प्रतिष्ठा को प्रभावित कर सकता है। निर्भीक और निष्पक्ष न्याय की अदालतें एक स्वस्थ लोकतंत्र की आधारशिला हैं और उन पर दुर्भावनापूर्ण हमलों से उनमें विश्वास को कम करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। जैसा कि न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने री के मामले में कहाः एस. मुलगांवकर

(उपर्युक्त), किस निर्णय पर, श्री दवे ने दृढ़ता से भरोसा किया है, यदि न्यायालय न्यायाधीश या न्यायाधीशों पर हमले को अपमानजनक, अपमानजनक मानता है, क्षमा करने योग्य सीमाओं से परे डराने या दुर्भावनापूर्ण, कानून की मजबूत शाखा को जनहित और सार्वजनिक न्याय के नाम पर उस पर प्रहार करना चाहिए जो कानून के शासन की सर्वोच्चता को उसके स्रोत और धारा को दूषित करके चुनौती देता है।

74. इस न्यायालय की संक्षिप्त अधिकारिता का प्रयोग व्यक्तिगत रूप से हमला किए गए या बदनाम किए गए व्यक्तिगत न्यायाधीश की गरिमा और सम्मान को सही साबित करने के लिए नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि कानून और न्याय प्रशासन की महिमा को बनाए रखने के लिए किया जाना चाहिए। न्यायपालिका की नींव निडर और निष्पक्ष न्याय देने की अपनी क्षमता में लोगों का विश्वास और विश्वास है। जब नींव को उन कृत्यों द्वारा हिलाने की कोशिश की जाती है जो अदालत के काम में अविश्वास पैदा करके अदालत के अधिकार के लिए असंतोष और अनादर पैदा करते हैं, तो न्यायिक प्रणाली की इमारत नष्ट हो जाती है। कथित आई. एन. आर. ई. द्वारा घृणित/दुर्भावनापूर्ण हमलेः

प्रशांत भूषण और एएनआर।

अवमानक संख्या 1 न केवल एक या दो न्यायाधीशों के खिलाफ है, बल्कि पिछले छह वर्षों के अपने कामकाज में पूरे सर्वोच्च न्यायालय के खिलाफ है। ऐसा हमला जो अधिकार के प्रति असंतोष और अनादर पैदा करता है

इस न्यायालय को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। हाल ही में, न्यायिक पारदर्शिता के लिए राष्ट्रीय वकीलों के अभियान के मामलों में सर्वोच्च न्यायालय और

सुधार और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य "और पुनः: विजय कुर्ले और अन्य (उपरोक्त) ने उन अधिवक्ताओं के खिलाफ स्वतः संज्ञान लेते हुए कार्रवाई की है जिन्होंने व्यक्तिगत न्यायाधीश/न्यायाधीशों के खिलाफ निंदनीय आरोप लगाए थे। यहाँ कथित अवमानकर्ता ने उच्चतम न्यायालय की पूरी संस्था को बदनाम करने का प्रयास किया है। हम आर. वी. में न्यायमूर्ति विल्मोट की टिप्पणियों का लाभप्रद रूप से उल्लेख कर सकते हैं। अल्मोन "1765 में बनाया गया थाः

..... और जब भी कानून के प्रति लोगों की निष्ठा को मौलिक रूप से हिलाया जाता है, तो यह न्याय की सबसे घातक और सबसे खतरनाक बाधा होती है, और मेरी राय में, किसी भी अन्य बाधा की तुलना में अधिक तेजी से और तत्काल निवारण का आह्वान करता है।

न्यायाधीशों के लिए, निजी व्यक्तियों के रूप में, लेकिन क्योंकि वे ऐसे माध्यम हैं जिनके द्वारा राजा का न्याय लोगों तक पहुँचाया जाता है।

75. जो ट्वीट विकृत तथ्यों पर आधारित हैं, हमारे विचार में, वे 'आपराधिक अवमानना' के बराबर हैं।

76. जहां तक कथित अवमानक संख्या 2 का संबंध है, हम उसके द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण को स्वीकार करते हैं, कि वह केवल एक मध्यस्थ है और उपयोगकर्ता मंच पर क्या पोस्ट करते हैं, इस पर उसका कोई नियंत्रण नहीं है। इस अदालत द्वारा संज्ञान लिए जाने के तुरंत बाद इसने भी ईमानदारी दिखाई है क्योंकि उसने दोनों ट्वीट्स को निलंबित कर दिया है। इसलिए हम कथित अवमानकर्ता संख्या 2 को जारी किए गए नोटिस का निर्वहन करते हैं।

77. परिणामस्वरूप, हम कथित अवमाननाकर्ता नंबर 1-श्री प्रशांत भूषण को इस न्यायालय की आपराधिक अवमानना करने का दोषी ठहराते हैं।

समकालीन नंबर 1

को दोषी ठहराया गया।

कल्पना के. त्रिपाठी 15 2019 एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 411 16 1765 विल्मोट के नोट्स 243: 97 ईआर 94